Year 21, Issue 81
Jan.-March, 2024

VASUDHA
A CANADIAN PUBLICATION

FOUNDER-EDITOR-PUBLISHER : DR. SNEH THAKORE
AWARDED BY THE PRESIDENT OF INDIA

कैनेडा से प्रकाशित साहित्यिक पत्रिका

वसुधा

संस्थापक, सम्पादक व प्रकाशक

डॉ. स्नेह ठाकुर

भारत के राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत

वर्ष २१ - अंक ८१, जनवरी – मार्च २०२४

विश्वंभरा

पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह शशि

विश्वंभरा,
हरीतिमा के हिंडोले में झुलाती
आदिमानव को,
जनमती जल-प्रपातों को,
गंगा, टेम्स, डेन्यूब, नील और अमेजन को
जननी विश्व के हिमनद-नदियों की
ममतामयी माँ महासागरों की
हिमालय-यूराल से पहाड़ों को ढोती
ज्वालामुखियों की आग में दहती
मानव-जीवन की संजीवनी
प्रणाम स्वीकारो माँ,
मोहनजोदड़ों, अस्तेक, बेबीलोनिया
स्वायंभुव से वैवस्वत तक के कितने
युगाब्द लेटे हैं तेरी गोद में
और मैं भी समा जाऊँगा
पंच-तत्त्वों में एक दिन
चिरनिद्रा के अंक से लिपट
और फिर एक कलम उगेगी
मेरे अस्थि-कलश से
जो फिर से लिखेगी
अग्निगीत
शोषण और अन्याय के विरुद्ध
और गुनगुनाएगी प्यार का संगीत
वसुधैव कुटुंबकम् की वीणा में
विश्व-शांति के लिए.

संस्थापक, सम्पादक व प्रकाशक : डॉ. स्नेह ठाकुर

भारत के राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रपति भवन में "हिन्दी सेवी सम्मान" से सम्मानित

(पोस्ट-डॉक्टरल फ़ेलोशिप अवार्डी)

(वर्ल्ड बुक ऑफ़ रिकॉर्ड, लन्दन में नाम अंकित)

शीर्षक	रचयिता	पृष्ठ
सम्पादकीय		२
नव वर्ष २०२४	डॉ. आनंद वर्धन शर्मा	५
प्रात: नमन	अपराजिता शर्मा	६
गीता अध्याय १७	अविनाश कुमार	७
राष्ट्र देव है सबका	डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक'	८
सुई	संतोष चौबे	११
क्या १ जनवरी को नव वर्ष मानना उचित है?	गौरीशंकर वैश्व 'विनम्र'	१२
दरख्तों की परछाईं	प्रीति सिन्हा	१५
स्वाधीन भारत की राष्ट्र भाषा होगी हिन्दी	सुभाष चंद्र बोस	१६
पिता : नि:शब्द अभिव्यक्ति	श्याम सुंदर श्रीवास्तव 'कोमल'	१८
के. के.	सुशांत सुप्रिय	१९
समय की बात	डॉ. संजीव कुमार	२२
कर्मा	डॉ. पूजा हेमकुमार अलापुरिया	२४
कभी सोचा नहीं था	बुद्धिनाथ मिश्र	२४
कलियुग का सुदामा	अमित कौशल	२६
मकर संक्रान्ति	मुन्ना कुमार सिंह	२७
बहुत दूर डूबी पदचाप	डॉ. धनञ्जय सिंह	२८
महर्षि दयानंद का सत्यार्थ प्रकाश तथा अन्य साहित्य : एक विश्लेषण	पद्मश्री डॉ. श्यामसिंह शशि	३०
प्रश्नवाचक समय	धर्मपाल महेंद्र जैन	३३
बदलते परिवेश में हिंदी का नया स्वरूप	संतोष बंसल	३४
जैसा व्यक्तित्व हो	मीरा सिंह	३९
होली	सुनीता चाँदला	४४
शहर के लोग	पद्मश्री डॉ. श्यामसिंह शशि	१अ
डॉ. स्नेह ठाकुर का रचना संसार		४४अ

रचनाओं में निहित विचार तथा मन्तव्य रचनाकारों के निजी विचार तथा मन्तव्य हैं। 'वसुधा' रचनाकारों के विचारों के लिए उत्तरदायी नहीं है। प्रकाशक की आज्ञा बिना कोई रचना किसी प्रकार उद्धृत नहीं की जानी चाहिए। प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा।

रचनाएँ भेजने के लिए सम्पर्क पता :

16 Revlis Crescent, Toronto, Ontario M1V-1E9, Canada. TEL. 416-291-9534

वार्षिक शुल्क Annual subscription.....$25.00

डाक द्वारा By Mail $35.00, International Mail $40.00

Website: vasudhamagazine.ca

E-mail: dr.snehthakore@gmail.com

सम्पादकीय

वसुधा के सभी लेखकों एवं पाठकों को नव वर्ष की मंगल कामनाएँ। दोनों के अपरिमित सहयोग से ही वसुधा अपने मदमाते यौवन के २१वें वर्ष में पदार्पण कर रही है।

भारतीय ज्ञान परम्परा में पृथ्वी को मातृवत् सम्मान दिया जाता है। तथा इस पत्रिका को उसका पर्याय अर्थात् वसुधा अनेक वर्षों से आपको प्रकाशित रूप में भेजी जाती रही है, किन्तु कोरोना महमारी के पश्चात् ऑन लाईन सम्प्रेषित करने की आवश्यकता क्यों पड़ी इसके लिए परिस्थितियाँ उत्तरदायी हैं। हम उत्तरोत्तर वैश्विक स्वरूप में आप तक पहुँचाने का पुन: संकल्प लेते हैं। एवं एक वैदिक सूक्ति को यहाँ वसुधा के पाठकों को समर्पित करते हैं –

"मित्रस्य चक्षुवा 'समीक्षामहे'", अर्थात् मित्र की आँखों से सबको देखें तथा पृथ्यिव्या: यानि मेरी भूमि (पृथ्वी) मेरी माँ है।

इसी संदर्भ में -

"सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दु:ख भाग भवेत।"

उक्त संदेश से आप्लावित अनेक शुभाषितों से भारतीय वाङ्मय भरा पड़ा है। प्रसंगत: एक भारतीय महापुरुष महर्षि दयानंद सरस्वती की २००वीं जयंती का उद्घाटन करते हुए भारतीय प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी ने हाल ही में कहा था कि लोग अधिकार की बात करते हैं, कर्तव्य की नहीं", अगर २१वीं सदी में मेरे साथ ऐसा है तो डेढ़ सौ साल पहले सोचिए कि समाज को रास्ता दिखाने में स्वामी दयानंद सरस्वती को किस तरह की मुश्किलों का सामना करना पड़ा होगा।....उनका उद्देश्य गरीबों, पिछड़ों और वंचितों की प्राथमिकता पर सेवा करना है।"

मुझे इस बात की अत्यधिक प्रसन्नता है कि हिन्दी-अँग्रेजी के प्रतिष्ठित पद्मश्री लेखक डॉ. श्याम सिह शशि ने मेरे अनुरोध पर ऋषिवर दयानंद सरस्वती पर एक शोधपरक लेख लिखा है जिसे इस अंक में प्रकाशित किए जाने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। साथ ही इस सम्बन्ध में नव भारत टाइम्स नई दिल्ली में, १३ अप्रैल १९७५ को प्रकाशित उनकी एक बहुचर्चित छंदोबद्ध पुरानी रचना भी इस आलेख के अंत में साभार उद्धृत की जा रही है।

आप सबकी चहेती "वसुधा" के सम्पादक/प्रकाशक के रूप में निम्नांकित विज्ञप्ति जो लोकार्पण करने वाली संस्था ने प्रकाशित की थी, उस लोकार्पण का गौरवपूर्ण अहसास आप सबसे साझा करते हुए प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

"वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली" लेखक डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक' पुस्तक का लोकार्पण डॉ. स्नेह ठाकुर के कर-कमलों द्वारा सम्पन्न।"

दिल्ली, २ जनवरी, कनाडा से आई 'वसुधा' की सम्पादक/प्रकाशक डॉ. स्नेह ठाकुर ने उत्तराखंड के पूर्व मुख्यमंत्री तथा केन्द्र सरकार के पूर्व शिक्षा मंत्री डॉ रमेश पोखरियाल 'निशंक' द्वारा लिखित पुस्तक 'वीर चन्द्र सिंह गढ़वाली' का लोकार्पण किया -

ऑथर्स गिल्ड ऑफ इंडिया के अंतरराष्ट्रीय अध्यक्ष पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह शशि ने पुस्तक की अपनी भूमिका में डॉ.निशंक की रचनाधर्मिता की चर्चा करते हुए बताया, कि भारत सरकार के राष्ट्रीय पुस्तक न्यास ने इसे स्वतंत्रता सेनानी श्रृंखला में प्रकाशित कर न केवल एक बहादुर सैनिक द्वारा अंग्रेजों के विरुद्ध स्वतंत्रता संग्राम का मार्मिक चित्रण प्रकाशित किया है, बल्कि उत्तराखंड की शौर्य-परम्परा को भी प्रणाम किया है।

कार्यक्रम की अध्यक्षता कैपीटल यूनीवर्सिटी के कुलपति व मूल्य-परक शिक्षा के विशेषज्ञ प्रो० एम.के. वाजपेयी ने की तथा एजीआई के सचिव डॉ. शिवशंकर अवस्थी, 'गीता और स्वास्थ्य ' के लेखक डॉ. राधेश्याम मिश्र, अनेक पुस्तकों के लेखक डॉ.महेन्द्र शर्मा एवं लेखिकाएँ डॉ. नीलिमा शर्मा, डॉ ममता, श्रीमती ऋषि, डॉ. पूरनपाल, डॉ. अनिल, शशि भूषण तथा वैदिक साहित्य सेवी, राजेन्द्र दुर्गा, संजीव गर्ग, सुरेन्द्र, आदि द्वारा सभ्यता संस्कृति के दो सौवीं जयंती के अंक का भी लोकार्पण किया गया, जिसमें प्रधानमंत्री मोदी जी द्वारा स्वामी जी के सम्बन्ध में सचित्र विचार संकलित है व नेताजी सुभाष चन्द्र बोस द्वारा स्वामी दयानंद सरस्वती और आर्य समाज के विषय में विशेष उल्लेख है।

उपर्युक्त कार्यक्रम दिल्ली की ५० साल पुरानी संस्था रिसर्च फाउंडेशन के शिक्षा भवन में सम्पन हुआ। बड़े भाई शशि जी एवं इस कार्यक्रम से जुड़े सभी महान् व्यक्तियों के प्रति आभार ज्ञापित करती हूँ।

माननीया श्रीमती डॉ. सन्तोष खन्ना जी के तत्वावधान में विधि भारती परिषद् का समारोह भव्य रूप से सम्पन्न हुआ। “विधि भारती परिषद्” की ओर से हिन्दी साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र में एकनिष्ठ कर्मयोगी के रूप में प्रेरक अवदान के लिए “राष्ट्र भारती सम्मान” पाकर अभिभूत हुई। और साथ ही माननीया सन्तोष खन्ना जी द्वारा ही “विधि भारती परिषद्” के तत्वावधान में ही आयोजित भारत के रेमन मैग्सेसे अवार्डीज़ पर वर्ल्ड बुक ऑफ रिकॉर्ड, लंदन में सम्मिलित अंतर्राष्ट्रीय काव्य संग्रह, “काव्य सलिला” में सृजन के लिए “अंतरराष्ट्रीय वागेश्वरी सृजन सम्मान” से सम्मानित भी हुई। और इतना ही नहीं वर्ल्ड बुक ऑफ रिकॉर्ड्स लंदन के गोल्डन एडीशन “काव्य सलिला” में भागीदारी हेतु प्रमाण पत्र प्रदान किया गया। प्रिय सन्तोष जी ने अपने पावन-पुनीत गृह में अपने प्रेममय परिवार के साथ इस दौरान अपने साहचर्य में रखा, जमकर रात-दिन साहित्यिक चर्चाएँ हुईं। कब सुबह से साँझ हुई और साँझ रात्रि में परिवर्तित हो गई पता ही नहीं चला। समय का आभास ही नहीं हुआ। पुत्र वरिष्ठ सर्जन डॉ. राजीव खन्ना, पुत्रवधु डॉ. आशु खन्ना, पोते आकाश, गर्लफ्रेंड विरोनिका अरुण, आस्ट्रेलिया से आई पोती साक्षी, यहाँ तक कि गृह-कार्य करने वाली सहायिका शारदा ने भी अपने प्रेम से अभिभूत किया। हृदय की अतल गहराइयों से सभी को आभार।

आयुर्वेद के ज्ञानी डॉ. राजेश बतरा जी ने आयुर्वेद पर आधारित एक भव्य समारोह का आयोजन किया जो बहुत ही ज्ञान-वर्धक था और उस समारोह में मुझे सम्मिलित कर सम्मानित किया। उनके प्रति हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ।

आजादी के अमृत महोत्सव काल में हार्वर्ड वर्ल्ड रिकॉर्ड, लंदन हेतु “अखण्ड भारत” में सम्मिलित होना और शील्ड स्वीकारना गौरव की बात थी। डॉ. विदुषी शर्मा को हार्दिक आभार ज्ञापित करती हूँ।

डॉ. धनंजय सिंह ने अपने निवास स्थान पर एक भव्य संगोष्ठी का आयोजन कर अभिभूत किया। मधु जी ने अपने घुटने के दर्द के बावजूद भी, जिसका ऑपरेशन भी कुछ ही दिनों में होने वाला था, बड़ी ही आत्मीयता से हृदय-स्पर्शी स्वागत-सत्कार किया। कवि मंडली ने भी एक से बढ़कर एक कविता का रसास्वादन करवाया। अभूतपूर्व संध्या हेतु आभारी हूँ।

रबिंद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के विश्व रंग के मंच पर प्रवासी भारतीय साहित्यकार के रूप में एवं “वसुधा” पत्रिका की संस्थापक-प्रकाशक एवं सम्पादक के रूप में मुझे सम्मिलित होने एवं वहाँ अपने विचार व्यक्त करने/साझा करने का अवसर मिला, अनेक विद्वानों से विचार-विमर्श हुआ और वहाँ सम्मानित भी हुई। रबिंद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के चांसलर माननीय संतोष चौबे जी, माननीय जवाहर कर्णावट जी पग-पग पर हम सबके साथ रहे। विश्व के अनेक देशों के साहित्यकारों से हमारा जुड़ाव हुआ। इस हेतु माननीय चांसलर संतोष चौबे जी, माननीय जवाहर कर्णावट जी एवं उनकी पूरी सहयोगी टीम की आभारी हूँ। सभी ने पूर्णरूपेण हम सबका साथ दिया। भोपाल में हम सबका दूल्हे की बारात जैसा भव्य स्वागत हुआ। जिसमें श्री अरविन्द

चतुर्वेदी जी का बहुत बड़ा योगदान था। उन्होंने अपने सहयोगियों के साथ बड़े ही मैत्रीपूर्ण भाव से सभी को प्रफुल्लता के घेरे में घेरे रखा। जहाँ पुराने परिचितों ने मिलकर आनंद दिया, भूले-बिसरे दिन याद कर हम आनंदित हुए, वहीं कुछ नए मित्र बने और हृदयाकाश पर उनकी छवि सदा के लिए छा गई। होटल रेडिसन में ठहरे साहित्यकार मेहमानों एवं मेजबानों का एक ग्रुप बन गया जो आज भी अपनी बातों का, समाचारों का आदान-प्रदान करते हैं। रबिंद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के प्रांगण में समाए अनेकों भवन अपनी-अपनी उपयोगिता का डंका बजाते हुए आपको बरबस अपनी ओर आकर्षित करते हैं। उपयोगी पुस्तकालय, प्रिंटिंग प्रेस, संगीत, अभिनय, कला क्षेत्र के संसाधन, यहाँ तक कि वहाँ रहने के आवास भी, सभी अपनी सम्पूर्णता में आपको आकर्षित करते हैं। विश्वविद्यालय के सभी प्रोफेसर सभी अधिकारी, छात्र-छात्राएँ, सम्पूर्ण वातावरण आपको अपने प्रेम से अभिभूत करता है। और अंत में माननीय डॉ. मनोज श्रीवास्तव जी के भव्य आवास में पति-पत्नी दोनों के द्वारा जो हम सबका मधुर संगीत की स्वरलहरी से झंकृत वातावरण में सुस्वादिष्ट भोजन के साथ भव्य स्वागत-सत्कार हुआ है, शारीरक, मानसिक, संगीतमय तृप्ति हुई है, संतुष्टि हुई है, वह अविस्मरणीय है। ऐसी स्मृतियाँ सँजोकर ले आना हम सभी के लिए सौभाग्य की बात थी।

भोपाल में ही माननीय चौबे जी के सौजन्य से ही "पब्लिक रिलेशन्स सोसायटी ऑफ इंडिया, भोपाल" द्वारा प्रवासी साहित्यकार सम्मान समारोह के अवसर पर साहित्य और भाषा के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए मुझे "साहित्य एवं भाषा सम्मान" प्रदान किया गया। अध्यक्ष मनोज द्विवेदी जी, सचिव पंकज मिश्रा जी, कोषाध्यक्ष के.के. शुक्ला जी एवं मंच पर उपस्थित सभी शुभाकांक्षियों तथा सम्पूर्ण टीम के प्रति अपना आभार ज्ञापित करती हूँ।

भोपाल यात्रा एक अन्य कारण से भी विशेष रही। भारतीय जनता पार्टी के माननीय श्री प्रभात झा जी से उनके निवास स्थान पर, परिवार की प्रेममयी उपस्थिति में सुस्वादु भोजन के दौरान सामान्य वार्तालाप और साहित्यिक वार्तालाप का जो दौर चला वह भविष्य की दूसरी मुलाकात तक मस्तिष्क के किसी कोने में स्मृतियों की जुगाली करता हुआ उन स्वर्णिम क्षणों की याद दिलाता रहेगा। प्रभात जी व उनके परिवार के प्रति आभारी हूँ।

कई वर्षों पूर्व गरिमामय "विश्व हिन्दी सम्मान" - जिस कार्यक्रम का भारत के प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेंद्र मोदी जी ने उद्घाटन किया था, और जिसे माननीय श्री राजनाथ सिंह और माननीय शिवराज सिंह जी ने प्रदान किया था और जिसे उस समय स्नेहपूर्वक, आभार सहित ग्रहण करने गई थी, इस काल-खण्ड में उस समय की भोपाल की स्नेहसिक्त अनुभूतियों की पुनरावृत्ति हो उठी।

आयोजक कि. शास. कला एवं विज्ञान (अग्रणी) महाविद्यालय रायगढ़, (छ.ग.), के स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग प्रमुख डॉ. मीनकेतन प्रधान जी द्वारा प्रदत्त स्मृति चिह्न की आभारी हूँ जो सदा स्मृति में अंकित रहेगा। बहुत ही ज्ञान-वर्धक आयोजन था। उस समय हुए प्रकाशन "छायावाद के सौ वर्ष और मुकुटधर पाण्डेय" जिसका सम्पादन डॉ. मीनकेतन प्रधान जी ने ही किया था, बहुत ही सारगर्भित बना है। अवश्य ही विद्यार्थियों के लिए अत्यंत लाभदायी सिद्ध होगा।

अयोध्या, श्रीराम धाम जाकर सियराम के दर्शन की अभिलाषा है। आशा है कि अगले अंक में उसका आँखों देखा विवरण दे सकूँगी। अभी तो विश्व-कल्याण की मंगल-कामना करते हुए सभी को नव वर्ष की हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित कर रही हूँ। ईश्वर सबको सद्बुद्धि दें। मांगलिक कर्मों से सबका जीवन मंगलमय बनाएँ।

नव वर्ष २०२४

डॉ. आनंद वर्धन शर्मा

दूर क्षितिज के छोर पर जाता खड़ा है साल,
ले रहा हम सब से विदा, कहता रहो खुशहाल,
सूर्य के रथ बैठ देखो आ रहा नव वर्ष,
मुक्त मन सम्वेदना का लिए है स्पर्श,
करें स्वागत चाँद, तारों का, बहारों का,
सूर्य का, हिम बिन्दु, पुरवा की फुहारों का,
धूप, वासंती हवा, पछुआ बयारों का,
खिली बगिया वनों, नदियों के किनारों का,
फैल जाए रश्मि, जीवन में रहे उत्कर्ष,
हर्ष से सबके भरा हो,
आ रहा नव वर्ष.

प्रात: नमन

अपराजिता शर्मा

उगते सूरज और चाँद में
जब तक है अरुणाई
हिन्द महासागर में
जब तक है तरुणाई
वृद्ध हिमालय जब तक
सर पर श्वेत जटाएँ बाँधे
भारत की गणतंत्र पताका रहे
गगन पर छाई!
गणतंत्र दिवस की
हार्दिक बधाई।

जयहिंद

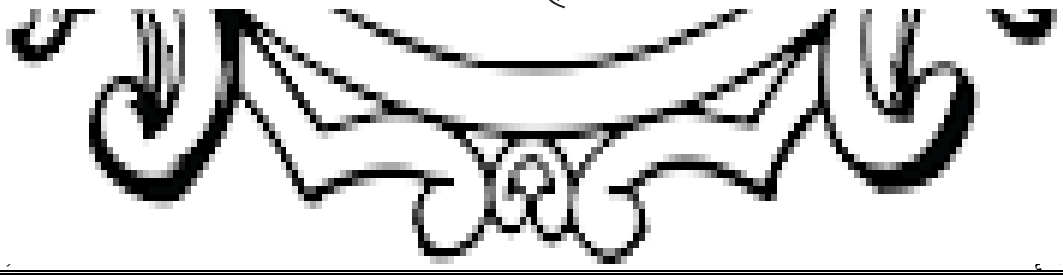

गीता अध्याय १७ – श्रद्धा त्रय-विभाग योग

अविनाश कुमार

इस अध्याय में कृष्ण तीन प्रकार की श्रद्धा, यज्ञ, तप और दान का वर्णन करते हैं। सात्विक गुण निष्फल भाव से पूजन, यज्ञ, तप और दान कर्मो को प्रेरित करते हैं। राजसी गुण फलेच्छा एवं ऐश्वर्य की कामना और तामसिक गुण भोग विलास की भावना से कर्मो को प्रेरित करते हैं।

मृत्युलोक मे बसे मनुज की - श्रद्धा तीन प्रकार
सात्विकी, राजसी, तामसी – सुन अर्जुन वीर अपार (०२)

श्री कृष्ण मनुष्य की भावना अनुरूप उसके भक्ति, भोजन, यज्ञ, तप, दान कर्मो का वर्णन करते हैं और भावना के प्रताप स्वरूप ही फल उत्पन्न होता है, ऐसा कहते हैं।

सात्विक पूजे देवों को, अदेव को पूजे राजसी,
भूत प्रेत को भोग लगाए, निष्ठा जिनकी तामसी। (०४)
तीन तरह का भोजन होता, होते यज्ञ तप दान,
तीन तरह के भेद बता, अर्जुन तू ले जान। (०७)
सात्विक तो आहार है करता, घी रस से परिपूर्ण,
आयु, बल, बुद्धि धन देता, रोग को करता चूर्ण। (०८)
राजसी खट्टा कड़वा खाता, गरम, जलन और तीखा,
उसका जीवन कष्ट में बीते, दुख और शोक सरीखा। (०९)
जो भोजन हो बासी, गंधित, या फिर हो अशुद्ध – जूठा,
ऐसा केवल तामसी खाएँ, भाग्य भी उनसे रूठा। (१०)
यज्ञ जो करते विधि स्वरूप, फल की इच्छा त्याग,
वही सात्विक गुण विराजे, पाये हरि अनुराग। (११)
किन्तु यज्ञ जो करते मन में, रख के अपने कारण,
उनका तप है झूठ छलवा, राजसी समझो राजन। (१२)
और अगर यज्ञ में न हो, दान श्रद्धा, या ज्ञान,
ऐसे यज्ञ के कर्ता को, तामसी तुम लो जान। (१३)

राष्ट्र देव है सबका

डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक'

यही राष्ट्र है देव सभी का,
यही पूज्य है हम सभी का,
प्राण भरा है ज्ञान दिया है,
सुप्त हुआ था जन कब का।

भव्य पुरुष बन राष्ट्र खड़ा है,
ब्रह्म यही ब्रह्माण्ड यही,
षड्ऋतु जिसमें स्वर्ग हार है,
वेद मंत्र का प्राण वही।

वेद ऋचाएँ अखिल विश्व में,
करती दूर तम हृदय का,
यही राष्ट्र है देव सभी का,
यही पूज्य है हम सबका।

देव कंठ में हार रूप है,
भारत की अगणित नदियाँ,
चरण चूमते आया है जग,
बीत गईं अगणित सदियाँ।

पुण्य करे पावन प्राणी को,
एक बिन्दु भी इस रज का,
यही राष्ट्र है देव सभी का,
यही पूज्य है हम सबका।

अतुल शक्तिधारी पुरु भी है यह,
इसका कण-कण चंदन है,
करें अर्चना वंदन इसका,
पल-पल हर मानव-मन है।

नित्य करें पूजन अर्चन सब,
कर्तव्य यही है हर जन का।
यही राष्ट्र है देव सभी का,
यही पूज्य है हम सबका।

सिर पर ताज हिमालय जिसके,
पाँव पखारे जल सागर
मार्ग दिखाकर दुष्ट संहारे
जिसमें नित नटवर नागर।

कैसा था यह राष्ट्र व्यक्ति भी,
वह युग था कैसा तब का,
यही राष्ट्र है देव सभी का,
यही पूज्य है हम सबका।

देव यहीं जिसने हँसते ही,
हमको शैशव प्यार किया,
ध्यान हटाकर अंधकार से,
जीवन का नव सार दिया।

यह अज्ञानी आज बना क्यों,
दिव्य पुरुष था जो तब का,
यही राष्ट्र है देव सभी का,
यही पूज्य है हम सबका।

तन मन धन कण-कण में भी,
नित्य पूज देव का ध्यान धरें,
क्षणिक न भूलें राष्ट्र देव को,
शब्द-शब्द में गान करें।

लीन रहें सब भक्त ध्यान में
ध्यान रहे अब पल-पल का,
यही राष्ट्र है देव सभी का,
यही पूज्य है हम सबका।

सुई

संतोष चौबे
(चांसलर रबिंद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय)

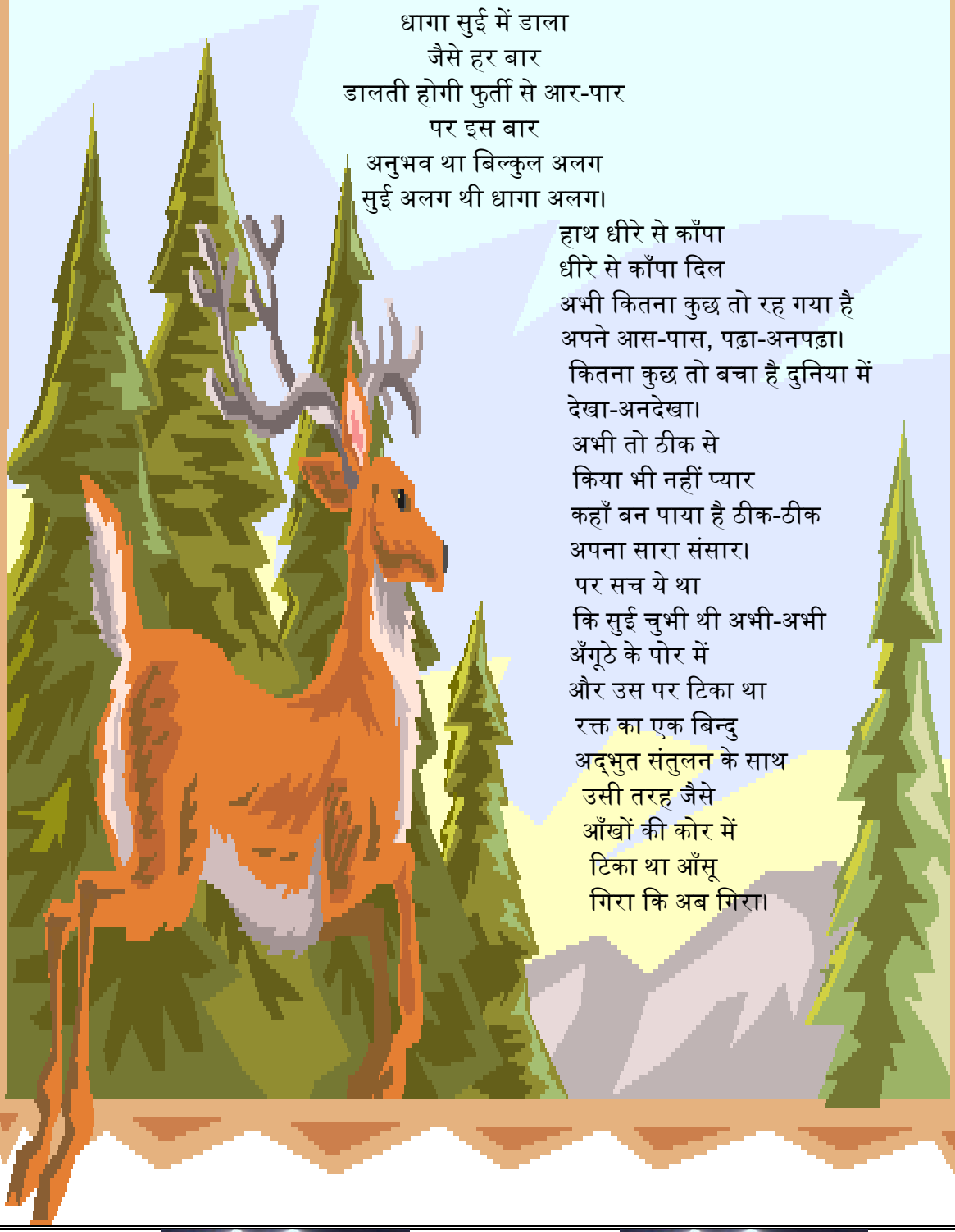

धागा सुई में डाला
जैसे हर बार
डालती होगी फुर्ती से आर-पार
पर इस बार
अनुभव था बिल्कुल अलग
सुई अलग थी धागा अलग।

हाथ धीरे से काँपा
धीरे से काँपा दिल
अभी कितना कुछ तो रह गया है
अपने आस-पास, पढ़ा-अनपढ़ा।
कितना कुछ तो बचा है दुनिया में
देखा-अनदेखा।
अभी तो ठीक से
किया भी नहीं प्यार
कहाँ बन पाया है ठीक-ठीक
अपना सारा संसार।
पर सच ये था
कि सुई चुभी थी अभी-अभी
अँगूठे के पोर में
और उस पर टिका था
रक्त का एक बिन्दु
अद्भुत संतुलन के साथ
उसी तरह जैसे
आँखों की कोर में
टिका था आँसू
गिरा कि अब गिरा।

क्या १ जनवरी को नववर्ष मनाना उचित है?

गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र'

१जनवरी से प्रतिवर्ष अँग्रेजी नववर्ष प्रारम्भ हो जाता है। यह अँग्रेजों के द्वारा हमें दी गयी एक कुप्रथा है, जो हमारी मानसिक दासता का प्रतीक है। यह सत्य है कि विश्व ने इसे अपना लिया है और हम आज अपने अधिकांश कार्य इसी वर्ष के अनुसार करने के लिए बाध्य हैं, परंतु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि यह नववर्ष हमारा नहीं है।

भीषण शीत में नया वर्ष मनाने का क्या औचित्य? जनवरी भीषण शीत का माह होता है। इस ऋतु में हिमालय की पर्वत श्रृंखलाओं पर बरफ गिरती है। वहाँ से आने वाली हवाएँ मानव सहित सभी प्राणियों को कँपकँपा देती हैं। इस बीच होने वाली वर्षा पारा को और नीचे सरका देती है। इस समय सुबह-शाम कोहरा, पाला, धुंध और शीतल हवा जनजीवन में कठिनाइयाँ बढ़ा देती हैं। न कहीं कोई उमंग दिखती है, न कोई रंग। हर जगह उबाऊ वातावरण दिखाई देता है।

३१ दिसम्बर की आधी रात से नए वर्ष का उत्सव मनाने वाले, एक बार अपने आप से पूछ लें, यह कैसा नया वर्ष है। न ऋतु बदली, न मौसम। न छात्रों की कक्षा बदली और न शिक्षा सत्र। न खेतों में फसल पकी और न वनस्पति में कुछ परिवर्तन हुआ। प्रकृति में वीरानी सी छाई रही। जीव-जन्तु ठण्ड से बचने के लिए कहीं दुबके रहे। पेड़-पौधों पर न नई कोंपलें आई और न पुष्प खिले। शीत ऋतु में छोटे दिन और लम्बी रातें, इससे आवश्यक काम समय से निबट ही नहीं पाते। १ जनवरी से प्रारम्भ होने वाले इस आँग्ल नववर्ष की बधाई भी मित्रों को देंगे तो कम्बल या रजाई से मुँह निकाल कर। अँग्रेजी नववर्ष को नृत्य, मौज-मस्ती, मदिरा सेवन के बाद हंगामा करने और होटलों में भोजन के साथ मनाने की प्रथा भारतीय नहीं हो सकती।

मौसम की दृष्टि से यह नववर्ष, भारतीय वातावरण के अनुकूल कदापि नहीं हो सकता, सनातन संस्कृति से तो इसका दूर-दूर तक नाता नहीं है।

अँग्रेजों ने हम पर थोपी है यह कुप्रथा।

जनवरी माह में नववर्ष मनाने की प्रथा हम पर अँग्रेजों ने अपने शासनकाल में थोपी है और हम अंधानुकरण करते हुए इस कलंक को ढो रहे हैं। भारत की स्वतंत्रता के अमृतकाल व्यतीत हो जाने पर भी हमारे बच्चों को यह जानकारी नहीं है कि हमारी अपनी कालगणना की पद्धति क्या है, देशी मासों के नाम क्या हैं तथा कुल ऋतुएँ कौन-सी हैं। आज अँग्रेजी माध्यम से पढ़ने वाले बच्चों को अपनी भाषा में गिनती नहीं आती और अभिवादन में चरणस्पर्श-नमस्ते करना तक नहीं जानते। वे अपने भारतीय संस्कार, भाषा और समाज से पूर्णतः कट चुके हैं और पाश्चात्य संस्कृति को अपना लिया है। अपने समाज में विशेष रूप से नई पीढ़ी को प्रेरणा देने वाले नवसंवत्सर से परिचित ही नहीं कराया जाता। हम अपनी भाषा, अपनी संस्कृति और अपने महापुरुषों को भूलकर, अपना विकास नहीं कर सकते।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने स्पष्ट कहा है -

"जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं, नर पशु निरा है और मृतक समान है।"

भारतीय नववर्ष चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को मनाना तर्कसंगत -

भारतीय नववर्ष, जिसको 'विक्रमी सम्वत्' भी कहते हैं, चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को मनाया जाता है। चैत्र मास में वासंती ऋतु होती है, चारों ओर फूल खिल जाते हैं, पेड़ों पर नए पत्ते आ जाते हैं, प्रकृति में वसंत ऋतु की सुषमा मन मोह लेती है। इस समय में सर्दी जा रही होती है और गर्मी का आगमन होने जा रहा होता है। मार्च - अप्रैल में विद्यालयों के परिणाम आ जाते हैं, नवसत्र प्रारम्भ हो जाता है और बच्चे नए उत्साह से नई कक्षा में प्रवेश लेते हैं। ३१ मार्च को बैंकों की बंदी (क्लोजिंग) होती है, व्यापारी नए बही-खाते खोलते हैं। सरकार का भी नया सत्र प्रारम्भ होता है। इसी ऋतु में खेतों में पकी फसल काटी जाती है, नया अनाज घर में आता है जिससे कृषकों का नया वर्ष उनके उत्साह को दोगुना कर देता है।

वर्ष के अतिरिक्त, दिन के हिसाब से भी आज भी हम सम्वत् को महत्व देते हैं। अपने महापुरुषों के जन्मदिन - रामनवमी, जन्माष्टमी, सभी व्रत - त्योहार जैसे शिवरात्रि, नवरात्र, रक्षाबंधन, भैयादूज, होली, दीपावली, दशहरा, चंद्र ग्रहण, सूर्य ग्रहण इत्यदि देशी तिथियों के अनुसार ही मनाए जाते हैं। घर-परिवार में सारे मांगलिक कार्य जैसे विवाह, जन्म पत्र, मुण्डन, गृह प्रवेश आदि में भी हम अपने सम्वत् के अनुसार ही शुभ मुहूर्त की गणना करते हैं। इससे स्पष्ट है कि कालगणना में 'भारतीय नवसंवत्सर' का स्थान विशेष महत्वपूर्ण है। भारतीय कालगणना की परम्परा प्राचीनतम, वैज्ञानिक और प्रकृति के अधिक निकट है।

भारतीय महीनों के नाम नक्षत्रों के अनुसार - नक्षत्रों की गणना करने वाले भारतीय महीनों का नामकरण नक्षत्रों से ही मानते हैं। तदनुसार, चित्रा नक्षत्र में आरम्भ होने कारण वर्ष के प्रथम महीने का नाम चैत्र रखा गया। विशाख नक्षत्र से वैशाख नामकरण हुआ। जेष्ठा से जेठ मास, उत्तर आषाढ़ ही आषाढ़ महीने का जन्मदाता हुआ, श्रवण से श्रावण, उत्तरा भाद्र नक्षत्र के कारण भादों, अश्विन नक्षत्र से आश्विन, कृतिका नक्षत्र से कार्तिक, मृगशिरा से मार्गशीर्ष, पौष से पूस तथा माघ नक्षत्र से माघ महीने का नाम रखा गया। भारतीय वर्ष में प्रत्येक माह में दो पक्ष चंद्रमा की गति के अनुसार रखे गए - ये हैं कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष। दोनों पक्षों में १५-१५ दिन होते हैं और प्रत्येक मास में ३० दिन होते हैं। इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि इस विधि से तिथि पूछने के लिए रेडियो, टीवी या अखबार का सहारा नहीं लेना पड़ता।

अँग्रेजी कैलेण्डर, जिसे हम आज कालगणना के लिए प्रयोग में लाते हैं, उसमें छः - सात सौ वर्ष पहले तक वर्ष के दस मास थे। इन मासों के नाम गिनती के ऊपर आधारित हैं, जैसे सैपेटम्बर अर्थात सातवाँ, अक्टूबर अर्थात् आठवाँ, नवम्बर अर्थात् नौवाँ और दिसम्बर अर्थात् दसवाँ मास कहलाता था। पहले जुलाई और बाद में अगस्त मास को तत्कालीन राजाओं के नाम के साथ जोड़ा गया। उसमें भी जुलाई और अगस्त दोनों महीनों को ३१ दिन का करने का विधान उन राजाओं की हठधर्मी के कारण किया गया, भले ही उसके लिए फरवरी माह में दिन कम करने पड़े।

अँग्रेजी नववर्ष का कोई ऐतिहासिक महत्व नहीं -

१ जनवरी का कोई ऐतिहासिक महत्व नहीं है। अँग्रेजी कैलेण्डर की तारीख और अँग्रेज मानसिकता के लोगों के अतिरिक्त कुछ नहीं बदला। अतः विज्ञान आधारित कालगणना को पहचानें। केवल कैलेण्डर बदलें, संस्कृति नहीं।

विक्रमी सम्वत्, जो शुद्ध रूप से महाराजा विक्रमादित्य, जिनका राज्याभिषेक ईसा से ५७ वर्ष पूर्व हुआ था, जो जनहित और लोकमंगल के प्रति एक समर्पित साधक थे, उनसे जुड़ी मान्यताओं को महत्व देता है और भारतीय विक्रमी सम्वत् के शुभारम्भ को नववर्ष के रूप में मनाने हेतु आग्रह किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त भगवान झूलेलाल का जन्म, नवरात्र आरभ, ब्रह्मा जी द्वारा सृष्टि रचना, मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का राजतिलक, महाराज युधिष्ठिर का राजतिलक, महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा आर्य समाज की स्थापना इत्यादि महत्वपूर्ण घटनाओं का सम्बन्ध भी इसी दिन से है।

भारतीय नववर्ष मनाने का लें संकल्प –

हमारा अगला भारतीय नववर्ष दिनांक ९ अप्रैल २०२४ से प्रारम्भ हो रहा है, जो २०८१वाँ विक्रमी सम्वत् है। पंचांग के अनुसार इसका नाम 'क्रोधी है, जिसको पंचांग भेद से 'कालयुक्त' भी कहा जाएगा। इसका राजा मंगल और मंत्री शनिदेव होंगे।

अतः हम संकल्प लें कि रोमन कैलेण्डर १जनवरी को अँग्रेजी नववर्ष न मनाकर, अब भारतीय नववर्ष को धूमधाम से मनाएँगे। इसके लिए निम्नलिखित अनुष्ठान आयोजित किए जाने चाहिए -

नववर्ष की पूर्व संध्या पर घरों में तथा अन्य विभिन्न स्थलों पर संगीतमय भजन, गायत्री चालीसा, रामायण पाठ, गीता पाठ, हनुमान चालीसा आदि का गायन किया जाए। घरों की छतों पर ऊँ अंकित भगवा ध्वज फहराएँ।

घरों के द्वार पर नववर्ष की पूर्व संध्या पर दीपक जलाएँ तथा पर्व-त्योहार जैसे आयोजन किए जाएँ। इष्ट-मित्रों के साथ सहभोज करें। बच्चों को पार्क या सैर-सपाटा पर ले जाएँ।

नववर्ष पर शंख-ध्वनि से पूर्व प्रभातफेरी और सायंकाल शक्तिपीठों, प्रज्ञा-संस्थानों, मंदिरों आदि धर्म-स्थलों में दीप-यज्ञ के आयोजन किए जाएँ।

प्रिंट मीडिया और डिजिटल मीडिया में इसका भरपूर प्रचार किया जाए।

इष्ट-मित्रों से मिलकर या मोबाइल फोन के माध्यम से एक-दूसरे को भारतीय नववर्ष की बधाई एवं शुभकामना दी जाएँ।

निर्धनों में फल तथा वस्त्र वितरित किए जाएँ तथा भोजन कराने हेतु भंडारे की व्यवस्था की जाए।

गोशालाओं में गो-माताओं को गुड़ और विशेष चारे की व्यवस्था की जाए।

अतः आवश्यक है कि हम भारतीय नववर्ष के रूप में अपने सम्वत् के महत्व को पहचानें। अपनी संस्कृति और सनातन धर्म की रक्षा के लिए, इसे अपने जीवन से अधिक से अधिक जोड़ें और नई पीढ़ी को भी इससे जाग्रत करें। पाश्चात्य संस्कृति के आक्रमण से बचने के लिए हम अपने इतिहास, शास्त्र और परम्पराओं की अधिकाधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए समाज को आग्रह करें। समाज अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं की वैज्ञानिकता तथा श्रेष्ठता जानेगा तभी पाश्चात्य आक्रमणों से स्वयं की रक्षा करने में सक्षम होगा। भारतीय नववर्ष मंगलमय हो।

दरख़्तों की परछाईं

प्रीति सिन्हा

वह माँ थी
मानो दरख़्तों की परछाईं
लदी हुई थी उसमें
नातों-रिश्तो की अच्छाई
करती रही जीवन भर
छाँवों की भरपाई।

जन्म दिया था उसने
मजबूत डालियों को
दिया था आत्मबल उसने
झंझावातों को सहने को।

फला था उसने हमेशा
निर्भयता और अपराजेय का ढेर
अपनी डालियों को बनाया था उसने
अदम्य साहस और धैर्य का पेड़।

लगाई गई थी काटकर
थोड़ी मिट्टी में पानी डालकर
माँ की वह मजबूत डाली
फली-फूली वह थपेड़े खाकर
आँधी-पानी और हवा की
फूटी कलियाँ आत्म सम्मान की
निश्चिंत हुई माँ तब जाकर।

कलियों ने दिखायी थी निर्भयता
डालियों की बढ़ चुकी थी संघर्ष क्षमता
हर शाखा में थी माँ की आत्मदृढता
पहचान चुके थे वे माँ की महत्ता।

स्वाधीन भारत की राष्ट्रभाषा होगी हिंदी

सुभाष चंद्र बोस

हिंदी प्रेमियों,

बड़ी खुशी के साथ इस नगर में हम लोग आपका स्वागत करते हैं। जो सज्जन कलकत्ते से वाकिफ हैं, उनको यह बताने की जरूरत नहीं है कि कलकत्ते में पाँच लाख हिंदी भाषा-भाषी रहते हैं। शायद हिंदुस्तान के किसी भी प्रांत में - जो प्रांत हिन्दीवालों के घर हैं, उनमें भी कहीं इतने हिंदुस्तानी जबान बोलने वाले नहीं पाए जाते। साहित्य की दृष्टि से भी कलकत्ते का स्थान हिंदी के इतिहास में बहुत ऊँचा है। मैं हिंदी भाषा का पंडित नहीं हूँ – बड़े खेद के साथ यह बात भी मुझे स्वीकार करनी पड़ेगी कि मैं शुद्ध हिंदी बोल भी नहीं सकता इसलिए आप मुझसे यह उम्मीद नहीं कर सकते कि मैं हिंदी साहित्य के इतिहास के विषय में कुछ कहूँ। अपने मित्रों से मैंने सुना है कि आजकल के हिंदी गद्य का जन्म कलकत्ते में ही हुआ था। लल्लू लाल ने अपना 'प्रेम सागर' इसी नगर में बैठकर बनाया और सदल मिश्र ने 'चन्द्रावली' की रचना भी यहीं पर की। और यही दोनों सज्जन हिंदी गद्य के आचार्य माने जाते हैं। हिंदी का सबसे पहला प्रेस कलकत्ते में ही बना और सबसे पहला अखबार 'बिहार-बंधु' भी यहीं से निकला। इसीलिए हिंदी सम्पादन-कला के इतिहास में कलकत्ते का स्थान बहुत ऊँचा है। सबसे पहले कलकत्ता विश्वविद्यालय ने ही हिंदी को एम.ए. में स्थान दिया। आजकल भी हिंदी के लिए कलकत्ते में जो काम हो रहा है वह महत्त्वपूर्ण है। इसलिए जिनकी मातृभाषा हिंदी है, कलकत्ता उनके लिए घर जैसा ही है। कम से कम वे तो हमारे स्वागत की त्रुटियों या अभाव के लिए हमें क्षमा कर ही देंगे।

सबसे पहले मैं गलतफहमी दूर कर देना चाहता हूँ। कितने ही सज्जनों का ख्याल है कि बंगाली लोग या तो हिंदी के विरोधी होते हैं या उसके प्रति उपेक्षा करते हैं। बेपढ़े लोगों में ही नहीं, बल्कि सुशिक्षित सज्जनों के मन में भी इस प्रकार की आशंका पाई जाती है। यह बात भ्रमपूर्ण है और इसका खंडन करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ।

मैं व्यर्थ अभिमान नहीं करना चाहता पर इतना तो अवश्य कहूँगा कि हिंदी साहित्य के लिए जितना काम बंगालियों ने किया है उतना हिंदीभाषी प्रांत को छोड़कर और किसी प्रांत के निवासियों ने शायद ही किया हो। यहाँ मैं हिंदी प्रचार की बात नहीं करता, उसके लिए स्वामी दयानंद ने जो कुछ किया और महात्मा गाँधी जी जो कुछ कर रहे हैं, उसके लिए हम सब उनके कृतज्ञ हैं, पर हिंदी साहित्य की दृष्टि से कहता हूँ बिहार में हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि के प्रचार के लिए स्वर्गीय भूदेव मुखर्जी ने जो महान उद्योग किया था, क्या उसे हिंदी भाषा-भाषी भूल सकते हैं? और पंजाब में स्वर्गीय नवीनचंद्र राय ने जो प्रयत्न किया, क्या वह कभी भुलाया जा सकता है। मैंने सुना है कि यह काम इन दोनों बंगालियों ने १८८० के लगभग ऐसे समय में किया था, जब कि बिहार और पंजाब के हिंदी भाषा-भाषी या तो हिंदी के महत्त्व को समझते ही न थे, अथवा उसके विरोधी थे। ये लोग उत्तरी भारत में हिंदी आंदोलन के पथ-प्रदर्शक कहे जा सकते हैं।

संयुक्त प्रांत में इंडियन प्रेस के स्वामी स्वर्गीय चिंतामणि घोष ने प्रथम सर्वश्रेष्ठ मासिक पत्रिका 'सरस्वती' द्वारा और पचासों हिंदी ग्रन्थों को छपवाकर हिंदी साहित्य की जितनी सेवा की है, उतनी सेवा हिंदी भाषा-भाषी किसी प्रकाशक ने शायद ही की होगी। जस्टिस शारदाचरण मिश्र ने एक लिपि विस्तार परिषद को जन्म देकर और 'देवनागर' पत्र निकालकर हिंदी के लिए प्रशंसनीय कार्य किया था। 'हितवार्ता' के स्वामी एक बंगाली सज्जन ही थे और 'हिंदी बंगवासी' अब भी इसी प्रांत के एक निवासी द्वारा निकाला जा रहा है। आजकल भी हमलोग थोड़ी-बहुत सेवा हिंदी साहित्य की कर ही रहे हैं। कौन ऐसा कृतघ्न होगा जो श्री अमृतलाल जी चक्रवर्ती की, जो ४५ वर्ष से हिंदी पत्र सम्पादन का कार्य कर रहे हैं, हिंदी सेवा को भूल जावे? श्री नगेन्द्रनाथ बसु लगभग १५ वर्ष से हिंदी विश्वकोश द्वारा हिंदी की सेवा कर रहे हैं। श्री रामानंद चटर्जी 'विशाल भारत' द्वारा

हिंदी की सेवा कर रहे हैं। हमारी भाषा के जिन पचासों ग्रंथों का अनुवाद हिंदी में हुआ है और उनसे हिंदी-भाषा-भाषियों के ज्ञान में जो वृद्धि हुई है उसकी बात मैं यहाँ नहीं कहूँगा।

मैं शेखी नहीं मारता, व्यर्थ अभिमान नहीं करता, पर मैं नम्रतापूर्वक आपसे पूछना चाहता हूँ कि क्या यह सब जानते हुए भी कोई यह कहने का साहस कर सकता है कि हम लोग हिंदी के विरोधी हैं? मैं इस बात को मानता हूँ कि बंगाली लोग अपनी मातृभाषा से अत्यंत प्रेम करते हैं और यह कोई अपराध नहीं है। शायद हममें से कुछ ऐसे आदमी भी हैं, जिन्हें इस बात का डर है कि हिंदीवाले हमारी मातृभाषा बंगला को छुड़ाकर उसके स्थान में हिंदी रखवाना चाहते हैं। यह भी निराधार है। हिंदी प्रचार का उद्देश्य केवल यही है कि आजकल जो काम अँग्रेजी से लिया जाता है, वह आगे चलकर हिंदी से लिया जाए। अपनी माता से भी प्यारी मातृभाषा बंगला को तो हम कदापि नहीं छोड़ सकते। भारत के भिन्न-भिन्न प्रांतों के भाइयों से बातचीत करने के लिए हिंदी या हिंदुस्तानी तो हमको सीखनी ही चाहिए और स्वाधीन भारत के नवयुवकों को हिंदी के अतिरिक्त जर्मन, फ्रेंच आदि यूरोपीय भाषाओं में से भी एक-दो सीखनी पड़ेगी, नहीं तो हम अंतरराष्ट्रीय मामलों में दूसरी जातियों का मुकाबला नहीं कर सकेंगे।

महात्मा गाँधी जी से और आप लोगों से मैं प्रार्थना करूँगा कि हिंदी प्रचार का जैसा प्रबंध आपने मद्रास में किया है, वैसा बंगाल और आसाम में भी करें। स्थायी कार्यालय खोलकर आप लोग बंगाली छात्रों और कार्यकर्ताओं को हिंदी पढ़ाने का इंतजाम कीजिए। इस कलकत्ते में कितने ही बंगाली छात्र हिंदी पढ़ने के लिए तैयार हो जाएँगे। पढ़ाने वाले चाहिए। बंगाल धनवान प्रांत नहीं है और न यहाँ के छात्रों के पास इतना पैसा है कि वे शिक्षक रखकर हिंदी पढ़ सकें। यह कार्य तो अभी आप लोगों को ही करना होगा। अगर कलकत्ते के धनी-मानी हिंदी भाषा-भाषी सज्जन इधर ध्यान दें, तो कलकत्ते में ही नहीं, बंगाल तथा आसाम में भी हिंदी का प्रचार होना कोई बहुत कठिन काम नहीं है। आप बंगाली छात्रों को छात्रवृत्ति देकर हिंदी प्रचारक बना सकते हैं। बोलचाल की भाषा चार-पाँच महीने में पढ़ाकर और फिर परीक्षा लेकर आप लोग हिंदी का कोई प्रमाण-पत्र दे सकते हैं। मेरे जैसे आदमी को भी, जिसे समय बहुत कम मिलता है, आप हिंदी पढ़ाइए और फिर परीक्षा लीजिए। हम लोग, जो मजदूर आंदोलन में काम करते हैं, हिंदुस्तानी भाषा की जरूरत को हर रोज महसूस करते हैं। बिना हिंदुस्तानी भाषा जाने हम उत्तरी भारत के मजदूरों के दिल तक नहीं पहुँच सकते। अगर आप हम सब के लिए हिंदी पढ़ाने का इंतजाम कर देंगे, तो मैं यह विश्वास दिलाता हूँ कि हम लोग आप के योग्य शिष्य होने का भरपूर प्रयत्न करेंगे।

अंत में बंगाल के निवासियों से और खासतौर से यहाँ के नवयुवकों से मेरा अनुरोध है कि आप हिंदी पढ़ें, जो लोग अपने पास से शिक्षक रखकर पढ़ सकते हैं, वे वैसा करें। आगे चलकर बंगाल में हिंदी प्रचार का भार उन्हीं पर पड़ेगा, यद्यपि अभी हिंदी प्रांतों से सहायता लेना अनिवार्य है। दस-बीस हजार या लाख-दो लाख आदमियों के हिंदी पढ़ लेने का महत्त्व केवल पढ़ने वालों की संख्या तक ही निर्भर नहीं है। यह कार्य बड़ा दूरदर्शितापूर्ण है और इसका परिणाम बहुत दूर आगे चलकर निकलेगा। प्रांतीय ईर्ष्या, विद्वेष को दूर करने में जितनी सहायता इस हिंदी प्रचार से मिलेगी उतनी दूसरी किसी चीज से नहीं मिल सकती।

अपनी-अपनी प्रांतीय भाषाओं की भरपूर उन्नति कीजिए, उसमें कोई बाधा नहीं डालना चाहता और न हम किसी की बाधा को सहन ही कर सकते हैं पर सारे प्रांतों की सार्वजनिक भाषा का पद हिंदी या हिंदुस्तानी को ही मिले। नेहरू-रिपोर्ट में भी इसी की सिफारिश की गई है। यदि हम लोगों ने तन-मन-धन से प्रयत्न किया तो वह दिन दूर नहीं, जब भारत स्वाधीन होगा और उसकी राष्ट्रभाषा होगी हिंदी।

(कलकत्ता से प्रकाशित 'विशाल-भारत' के जनवरी १९२९ अंक में प्रकाशित)

पिता : निःशब्द अभिव्यक्ति

श्याम सुन्दर श्रीवास्तव 'कोमल'

पिता निःशब्द अभिव्यक्ति है
जो शब्दों के संसार से परे है
पिता जर्जर हड्डियों का वह संजाल है
जिसे बीमारी तोड़ती है
उम्र उसके अस्थि-जोड़ फोड़ती है
किंतु उसकी दृढ़ इच्छा-शक्ति के आगे
समस्त व्याधियाँ नत मस्तक हो जाती हैं
झुक जाती हैं
और पिता अपने दायित्वों की पूर्ति में निमग्न
खड़ा रहता है चट्टान की तरह अडिग
पिता अतुलित अदभुत् शक्ति है
हाँ! पिता निःशब्द अभिव्यक्ति हैं।

पिता की आँखों में होते हैं अनगिन सपने
आँखें पिता की होती हैं
और उनमें होते हैं संतान के सुनहरे भविष्य के सपने
जीवनभर ढोता रहता है बोझ हँसकर
और साकार होते रहते हैं उसकी आँखों के
सुनहरे, मटमैले, सतरंगी और इंद्रधनुषी सपने
खुद को भूलकर वह बस जानता है इतना
कि मुझे अभी जीना है,
और अभी बहुत कुछ करना है अपने बच्चों के लिए
जिसके मन मस्तिष्क पर छाया रहता है एक मानचित्र
अपने बच्चों के सुनहरे भविष्य का
वह स्वयं को भूलकर उसी में खो जाता है
जो अपने लिए नहीं अपनी संतान के लिए जीता है
पिता ही है वह व्यक्ति
हाँ! पिता है निःशब्द अभिव्यक्ति।

के. के.

सुशांत सुप्रिय

शिवाजी स्टेडियम के बस-स्टॉप पर उतर कर मैंने माथे का पसीना पोंछा और राहत की साँस ली । मैं कनॉट प्लेस में कुछ किताबें ख़रीदने के इरादे से घर से निकला था । महीने का पहला शनिवार था और अभी जेब में पैसे थे । सड़क पार करके मैं 'बुक-वर्म' की ओर चल पड़ा। शाम हो गई थी और तरह-तरह की चीज़ों से सजी हुई दुकानों में रोशनी की चकाचौंध थी । सामने से रंग-बिरंगी पोशाकों में कॉलेज की शोख़ लड़कियों का एक रेला आया । लड़कियों के इर्द-गिर्द कुछ मजनू-टाइप लड़के भी मँडरा रहे थे । जैसे गुड़ के गिर्द चींटियाँ ।

तभी पीछे से किसी ने मेरा नाम पुकारा । मैंने मुड़कर देखा । भीड़ में दूर चश्मा लगाए के.के. मेरी ओर हाथ हिला रहा था । मैं थोड़ा हैरान हो गया । के.के. और यहाँ ?

के.के. से मेरी पिछली मुलाक़ात तब की थी जब तीन साल पहले हम दोनों मुंबई के 'कंटेनर कॉर्पोरेशन ऑफ़ इंडिया' में अनुवादक थे । फिर मुझे दिल्ली में उससे बेहतर नौकरी मिल गई और मैं दिल्ली चला आया । तब से अब तक के. के. से मुलाक़ात नहीं हुई थी । हालाँकि जान-पहचान वालों से उसके बारे में कुछ-न-कुछ सुनने को मिल जाता था । जैसे — उसे 'कंटेनर कॉर्पोरेशन' की नौकरी से निकाल दिया गया था और अब वह मुंबई फ़िल्म-जगत में 'स्क्रिप्ट-राइटर' बनने की जुगाड़ में हाथ-पैर मार रहा था ।

"कैसे हो, प्रशांत? तुम बिल्कुल नहीं बदले । "हाथ मिलाते हुए उसने कहा । उसकी हथेली पसीने से चिपचिपी थी ।

"पर तुममें बहुत बदलाव आ गया है । पहले से दुबले हो गए हो और यह दाढ़ी कब रख ली?" मैंने पूछा ।

"चेंज इज़ द लॉ ऑफ़ नेचर । और फिर आदमी माँ के पेट से उस्तरा लेकर तो पैदा होता नहीं।" वह एक सूखी हँसी हँसता हुआ बोला । "चलो, कहीं बैठते हैं ।"

हम दोनों भारतीय कॉफ़ी हाउस की ओर चल पड़े ।

"आज-कल क्या कर रहे हो, के. के. ?"

"ख़ाली बैठा हूँ । झख मार रहा हूँ । कोई ढंग की नौकरी मिलती ही नहीं ।" उसकी सूखी हँसी दोबारा लौट आई ।

मुझे याद आया, के.के. नौकरियाँ छोड़ने के लिए बदनाम था । कंटेनर कॉर्पोरेशन से पहले वह डी.ए.वी. कॉलेज, पठानकोट में लेक्चरर था । उससे पहले वह दिल्ली में एक पब्लिक स्कूल में टीचर था । उससे पहले वह बिहार पुलिस में कांस्टेबल था । उससे पहले भी वह कहीं कुछ था, ठीक से याद नहीं आ रहा । लेकिन 'पंगे' लेने की अपनी आदत के चलते उसकी लोगों से बनती नहीं थी । वह कहीं भी ज़्यादा दिन नहीं टिक पाता था । या तो लड़ कर खुद ही नौकरी छोड़ देता था या नौकरी से निकाल दिया जाता था ।

"स्क्रिप्ट-राइटिंग' का क्या हुआ ?" मैंने पूछा ।

"वहाँ सब स्साले हरा... भरे हुए हैं । टेलेंट की कोई कद्र नहीं है । वहाँ सफल होने के लिए गॉडफ़ादर चाहिए । तभी ब्रेक मिलता है ।" उसने ऐसा मुँह बनाया जैसे कोई कड़वी चीज़ निगल ली हो ।

"स्टेट सर्विस कमिशन की परीक्षा में फिर नहीं बैठे?"

"सब स्साले चोर हैं। हर जगह रुपया चलता है। सिफ़ारिश चलती है। टेलेंटेड आदमी से लोग जलते हैं।" दाँतों से उँगलियों के नाखून कुतरता हुआ वह बोला।

मुझे 'कंटेनर कार्पोरेशन' के दिन याद आ गए। वहाँ के.के. 'ऐबॉर्टेड आई.ए.एस.' के नाम से बदनाम था। उसने अपने जीवन के चार साल से ज़्यादा आई.ए.एस. की परीक्षा में सफलता पाने में झोंक दिए। पर लाख कोशिश करने और चार बार परीक्षा देने के बावजूद कभी वह 'मेन्स' की परीक्षा में रह जाता तो कभी इंटरव्यू में छँट जाता।

फिर वह 'डिप्रेशन' का शिकार हो गया था। घर वाले उसका इलाज मनोचिकित्सक से करवाना चाहते थे। पर उसने इलाज कराने से इंकार कर दिया था। ज़िद्दी वह शुरू से ही था। इसी हालत में कभी-कभी दफ़्तर में चार लोगों को इकट्ठा कर के वह शुरू हो जाता, "तुम सब कुत्ते-बिल्ली हो, कुत्ते-बिल्ली ! पर मैं यहाँ सड़ने के लिए पैदा नहीं हुआ। तुम सब देखना। मैं बहुत ऊपर तक जाऊँगा। बहुत ऊपर। मेरा वक़्त आएगा। तुम सब देखना।"

धीरे-धीरे दफ़्तर में लोग उससे कतराने लगे थे।उसके सामने तो कुछ नहीं कहते , लेकिन पीठ पीछे बोलते, "स्साले का दिमाग़ खिसक गया है।"

के.के. भी आए दिन किसी-न-किसी से झगड़ा कर लेता। महिला सहकर्मियों तक से उल्टा-सीधा बोल देता। लोगों से रुपए-पैसे उधार ले लेता और नहीं लौटाता। पैसे माँगने पर उन्हें गालियाँ बकता। कई बार तो लोगों से मार-पीट की नौबत आ जाती। कभी वह किसी की क़मीज़ का कॉलर पकड़ लेता, कभी लड़ने के लिए अपनी बेल्ट, कभी अपना जूता निकाल लेता।

उसके बारे में कई चुटकुले चल निकले थे। जैसे — एक दिन के. के. ने एक बिल्ले का रास्ता काट दिया। बिल्ले ने घर लौट कर अपनी बिल्ली से कहा , "भागवान ! आज सुबह-सुबह के. के. मेरा रास्ता काट गया। पता नहीं, दिन भर में एक भी चूहा नसीब होगा या नहीं।" उसकी हरकतें देखकर दूसरी ब्रांच के लोग भी हमसे सहानुभूति जताते हुए पूछते, "आप लोग इस पागल को कैसे बर्दाश्त कर लेते हैं ?"

जब मुझे दिल्ली में दूसरी नौकरी मिल गई थी, ठीक उसी समय के.के. को ' कटेनर कॉर्पोरेशन' की नौकरी से सस्पेंड कर दिया गया था। वहाँ इसने अपने बॉस मिस्टर चड्ढा से नाराज़ होकर कुर्सी उठा कर उन्हें दे मारी थी।

****

कॉफी हाउस में बहुत भीड़ थी। किसी तरह एक कोने में एक ख़ाली टेबल ढूँढ़ कर हम वहाँ जा बैठे।

"इस बीच क्या करते रहे?" मैंने कॉफ़ी का ऑर्डर दे कर उससे पूछा।

"बहुत कुछ किया और कुछ भी नहीं किया।" उसके चेहरे पर वही सूखी हँसी लौट आई।

"क्या मतलब?" मैंने पूछा।

"डी.डी. मुंबई के लिए 'नई शिक्षा नीति' पर एक डॉक्यूमेंट्री बनाने का कांट्रैक्ट मिला था। बैंक से लोन लेकर इसमें हाथ डाला था। पर काम स्साला पूरा नहीं हो सका। सारा रुपया डूब गया। और भी एकाध जगह काम किया।" 'धूम्रपान निषेध' का बोर्ड देख कर एक सिगरेट सुलगा कर कुछ लम्बे कश लेता हुआ वह बोला, "शनि की साढ़े-साती चल रही है। जिस काम में हाथ डालता हूँ, वही अधूरा रह जाता है।"

फिर कॉफ़ी आने तक मैं उसे अपने बारे में बताता रहा।

कॉफ़ी पीने के बाद जब बैरा बिल ले कर आया तो के.के. उस से उलझ पड़ा, "यहाँ कॉफ़ी इतनी महँगी क्यों है ? ग्राहकों को लूटते हो ? कंज़्यूमर-कोर्ट में ले जाऊँगा, समझे ?"

के.के. की ऊँची आवाज़ सुन कर दो-चार और बैरे वहाँ इकट्ठे हो गए। माहौल बिगड़ने लगा।

एक बार घाटकोपर, मुंबई में भी वह किसी बस कंडक्टर से उलझ पड़ा था। उसने भी दो-चार दूसरे ड्राइवर और कंडक्टर मदद के लिए बुला लिए। उस दिन वह पिट जाता अगर ऐन मौक़े पर मैंने बीच-बचाव करके उसे वहाँ से नहीं निकाला होता। एक बार और वह पिटते-पिटते बचा था। चौपाटी पर एक भेलपूरी वाले को पचास का नोट देकर इसने हम दोनों के लिए भेलपूरी ली। फिर भेलपूरी वाले से कहने लगा कि मैंने तुझे सौ का नोट दिया है। बाक़ी पैसे वापस कर। वहाँ भी मामला गर्म होने पर मैं ही इसे बचा कर ले गया था।

एक बार फिर मुझे ही बीच-बचाव करना पड़ा। किसी तरह उसे समझा-बुझा कर मैंने कॉफ़ी का बिल अदा किया और हम कॉफ़ी-हाउस से बाहर निकल आए। रास्ते में 'धूम्रपान-निषेध' का एक और बोर्ड देखकर के. के. ने फिर से सिगरेट सुलगा ली। यह उसकी पुरानी आदत थी। जहाँ 'नो पार्किंग' लिखा होता, वह अपना स्कूटर वहीं खड़ा करता था।

मैंने बातचीत का विषय बदलते हुए कहा, "के.के., तुम शादी क्यों नहीं कर लेते ? शायद लड़की की क़िस्मत से तुम्हारे भाग्य का दरवाज़ा भी खुल जाए ?"

"हाँ, वैसे शादी के एक-दो ऑफ़र हैं तो सही। पर लड़कियाँ बिल्कुल 'बहन-जी' टाइप हैं। मैं भी सोचता हूँ, पहले सही नौकरी तो मिल जाए, फिर सही छोकरी भी मिल जाएगी।"

मैंने उसकी कनपटी के सफ़ेद होते बालों की ओर देखा और मुस्करा दिया। कनॉट प्लेस के अंदरूनी सर्कल में 'बुक-वर्म' से कुछ किताबें ख़रीद कर हम वापस शिवाजी स्टेडियम बस-स्टॉप की ओर चल दिए।

"आगे क्या करोगे, "रास्ते में मैंने उससे पूछा।"

कुछ देर चुप रहने के बाद जवाब में उसने ऐसा कुछ कहा जिसका मतलब था — दुनिया रसातल में जा रही है। तृतीय विश्व-युद्ध का ख़तरा है। अमेरिका आर्थिक उपनिवेशवाद फैला रहा है। बाज़ार हमारे घरों में घुसता जा रहा है। 'विश्व-सुंदरी' प्रतियोगिता नारी के सम्मान पर कलंक है। भारतीय हॉकी का भविष्य धूमिल है। और इस सब को रोकने के लिए उसे कुछ करना पड़ेगा ...

शिवाजी स्टेडियम पहुँचते ही मुझे अपने घर तक की सीधी बस मिल गई।

"अच्छा के. के., फिर मिलेंगे। तुम तो अभी दिल्ली में ही हो न ?" बस पर चढ़ते हुए मैंने पूछा।

"यार, एक ज़रूरत है। तुम्हारे पास हज़ार-पाँच सौ होंगे क्या? मैं लौटा दूँगा।" वह मेरा हाथ पकड़ कर बोला।

मुझे 'कंटेनर कॉर्पोरेशन' के दिन याद आ गए। इससे पहले कि मैं कोई फ़ैसला ले पाता कि उसे रुपए दूँ या न दूँ, खचाखच भर चुकी बस चल पड़ी। मैं बस के पायदान पर खड़ा उसे देखता रह गया। वह शून्य में ताकता हुआ स्टॉप पर खड़ा था। भीड़ में उसकी आकृति लगातार धुँधली होती जा रही थी। एक 'पिक्चर-पोस्टकार्ड' पर पड़े किसी धब्बे जैसी। फिर बस मुड़ गई और वह धब्बा आँखों से ओझल हो गया।

इस घटना के कुछ समय बाद मैं काम के सिलसिले में तीन-चार सालों के लिए सपरिवार विदेश चला गया। वहाँ जा कर मैं अपने काम-काज में कुछ इस कदर व्यस्त हो गया कि अपने देश के जान-पहचान वालों से लगभग कट-सा गया।

तीन साल बाद वापस अपने देश लौटे हुए मुझे अभी कुछ ही दिन हुए थे जब एक सुबह नाश्ते की मेज़ पर अख़बार में छपा एक चित्र देखकर मैं चौंक गया।

"क्या हुआ? क्या आप इन्हें जानते हैं ? "बग़ल में बैठी श्रीमती जी ने मेरी प्रतिक्रिया देखकर पूछा।

"अरे हाँ, यह तो के. के. है। किसी जमाने में मेरा कलीग था।" मैं अब भी विस्मित था।

अख़बार में छपे चित्र के नीचे बड़े-बड़े अक्षरों में छपा था — "प्रदेश के शिक्षा मंत्री श्री कृष्णकांत 'नई शिक्षा नीति' पर लिखी एक पुस्तक का विमोचन करते हुए।"

समय की बात

डॉ. संजीव कुमार

कल रुका नहीं
आज भी नहीं रुकेगा
और न ही कल।
समय की गति
कभी धीमी,
कभी तेज लगती है
पर वह रुकता नहीं।
जरूरत होती है
कि हम समझ सकें
समय की टिक-टिक
गति और भाव।
एक छोटी-सी चूक
समय को खो देती है,
जो नहीं आता कभी
लौट कर पास।

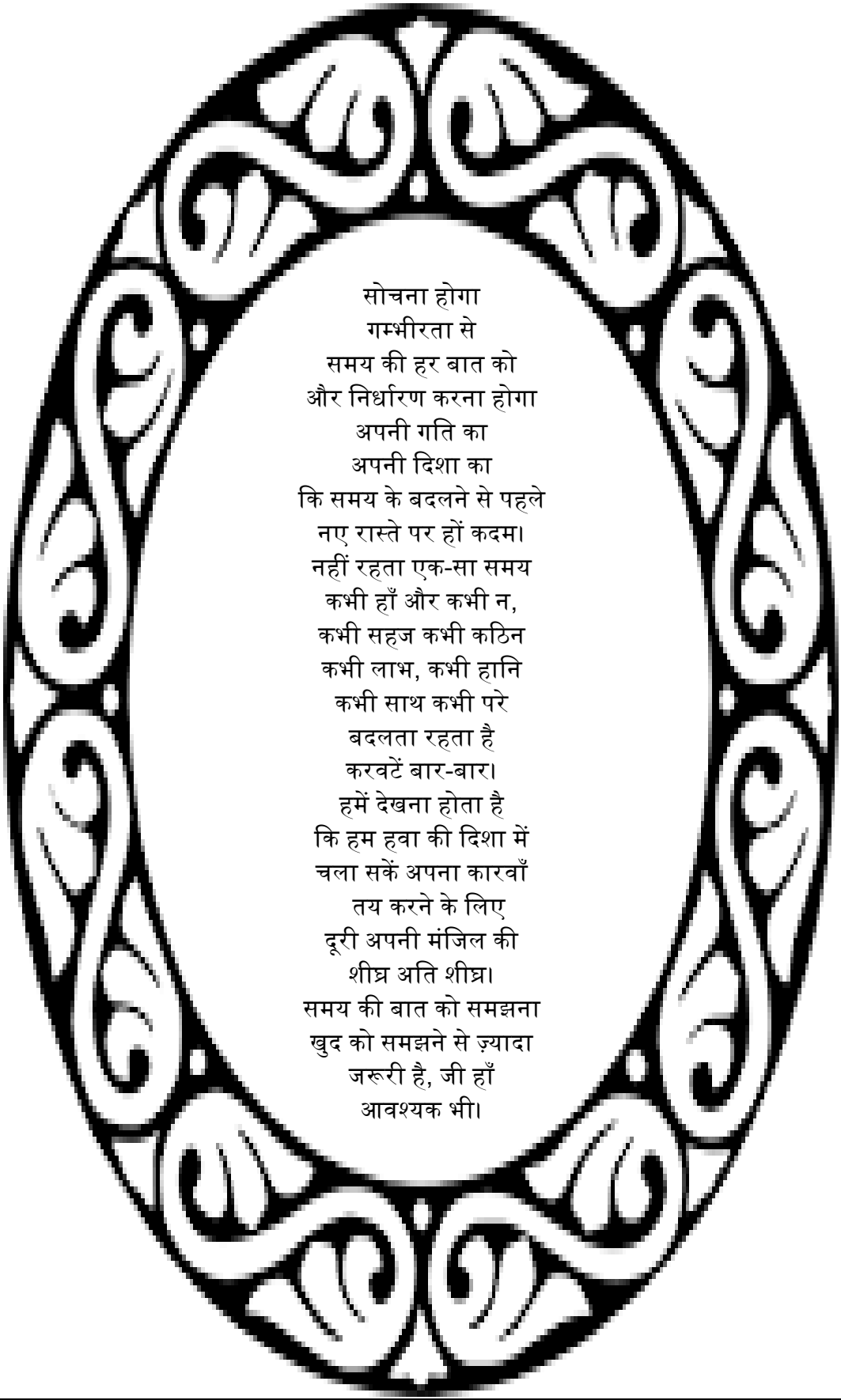

सोचना होगा
गम्भीरता से
समय की हर बात को
और निर्धारण करना होगा
अपनी गति का
अपनी दिशा का
कि समय के बदलने से पहले
नए रास्ते पर हों कदम।
नहीं रहता एक-सा समय
कभी हाँ और कभी न,
कभी सहज कभी कठिन
कभी लाभ, कभी हानि
कभी साथ कभी परे
बदलता रहता है
करवटें बार-बार।
हमें देखना होता है
कि हम हवा की दिशा में
चला सकें अपना कारवाँ
तय करने के लिए
दूरी अपनी मंजिल की
शीघ्र अति शीघ्र।
समय की बात को समझना
खुद को समझने से ज़्यादा
जरूरी है, जी हाँ
आवश्यक भी।

कर्मा

डॉ. पूजा हेमकुमार अलापुरिया

शांतनु अपने पापा के साथ बाजार गया। बाजार में काफी शॉपिंग के बाद वे लुहार की दुकान पर पहुँचे।

लोहार की दुकान देख शांतनु ने पापा से पूछा, "पापा ये लोहार क्या-क्या बनाते हैं?"

"बेटा वैसे तो लोहार सुई से लेकर दरवाजे, तगारी, फावड़ा, लोहे के फर्नीचर, बाल्टी समेत कृषि में उपयुक्त सभी औजारों का निर्माण करते हैं, लेकिन कभी-कभी समय, स्थान अथवा माँग के अनुसार भी लोहे का सामान बनाते हैं।" पापा ने शांतनु को बताया।

तभी शांतनु की नजर लोहार पर पड़ी, जो एक हाथ में गर्म लोहे को फोर्ज टोंग पर रख आकार देने के लिए दूसरे हाथ द्वारा बड़े से हथौड़े से बार-बार चोट दे रहा था। यह देख उसे अचम्भा हुआ।

उसकी प्रतिक्रिया देख पापा ने पूछा,"क्या हुआ शांतनु बेटा?"

"पापा देखो न बेचारा लोहा। क्या नसीब है इसका? आकार पाने के लिए इसे कितना कष्ट झेलना पड़ता है।" शांतनु ने लोहे पर व्यंग्य कसते हुए कहा।

पापा ने कहा, "बेटा, कर्मो का फल है। ढीट बच्चे और लोहे में कोई अंतर नहीं होता।"

कभी सोचा नहीं था

बुद्धिनाथ मिश्र

कभी सोचा नहीं था
घर ये मेरा घर नहीं होगा
बनाने में जिसे दिन-रात
सारी जिंदगी गुजरी।

हमारी बागवानी देखकर
दुनिया तरसती थी
तृषा की सीपियों में स्वाति की
बूँदें बरसती थीं
कमल की चाह में मैंने
गुलाबों को सँजोया यों
कि काँटे चुभ रहे थे जब,
उँगलियाँ तब भी हँसती थीं।

हमारी भूल थी या
भूल पुरखों की विरासत थी
कहूँ किससे कि किस दुख में
हमारी जिंदगी गुजरी ।

बड़े अरमान से साहब
बनाया अपने बेटे को
भरोसा आनेवाले कल पर
इतना था बिना सोचे
रखा गिरवी कटोरा धान का,
गहने सभी घर के
उड़ाने को उसे घन पार
अपने पंख तक नोचे

उड़ा था शौक से लेकिन
बला लिपटी गले ऐसी
कि हर दिन घर की यादों में
दुधारी जिंदगी गुजरी ।

गया वह दूर इतना,
भूल बैठा किसका बेटा है
नहीं है याद, किसकी गोद में
पलकर बढ़ा इतना
मवेशी मानते हैं पोस,
लेकिन आदमी है वह
खुली है छूट,कर लो भोग
दुनिया को जहाँ जितना

कभी सोचा नहीं, मैं भी जिऊँ
दो-चार पल सुख से
कभी देखा नहीं, किस पथ से
प्यारी जिंदगी गुजरी !

कलियुग का सुदामा

अमित कौशल

होता मैं सुदामा! होता मैं गरीब,
दिल में मित्रता, कृष्ण के रहता करीब,
गुरु माँ के हाथों चने मैं पाता,
पेड़ की शाखा बैठ उनको मैं खाता।

अपनी ग़रीबी मित्र तुम से छुपाता,
चावल की पोटली से तुम को रिझाता,
मेरी ग़रीबी बेबसी का तू सदा से ही ज्ञाता,
तेरे लग गले आनंद विभोर हो मैं पाता ।
अर्थ का मुझ में न लालच ही होता,
प्रेम भाव में दिल खाता जो गोता,
वस्त्र का ना कोई पहनवा ही होता,
दर्शन तेरे हो सूट-बूट, अश्क भर-भर मैं रोता।

मलिन मैं, साँवला मित्र रे तू मेरा,
सुदामा मित्र मैं प्राणों से प्रिय जो तेरा,
चौखट तेरी से खाली हाथ कैसे मैं जाऊँ?
रहूँ सुदामा हर जन्म, दर्शन ऐसे ही पाऊँ।

हर दुख हरता तू मित्र मुरारी मेरा,
कलयुग का मैं पापी जिसका जीवन अँधेरा,
द्वापर में मिला मुझे प्रभु का संग,
मृगतृष्णा की न खत्म होती ये जंग।

कलयुग का सुदामा तुझको बुलाए,
चनों का हिसाब कैसे सुदामा दे पाए?
द्वापर का गरीब कलयुग का भी गरीब,
दर्शन अभिलाषी मैं तेरा, तू हरदम करीब।

मकर संक्रान्ति

मुन्ना कुमार सिंह

पौष मास में जब सूर्य मकर राशि पर आता है तभी इस पर्व को मनाया जाता है। यह त्योहार जनवरी माह के चौदहवें या पन्द्रहवें दिन ही पड़ता है क्योंकि इसी दिन सूर्य धनु राशि को छोड़ मकर राशि में प्रवेश करता है। मकर संक्रान्ति के दिन से ही सूर्य की उत्तरायण गति भी प्रारम्भ होती है। इसलिये इस पर्व को कहीं-कहीं उत्तरायणी भी कहते हैं। तमिलनाडु में इसे पोंगल नामक उत्सव के रूप में मनाते हैं जबकि कर्नाटक, केरल तथा आंध्र प्रदेश में इसे केवल संक्रांति ही कहते हैं।

व्याकरण के दृष्टिकोण से 'क्रान्त' कहते हैं लाँघने / पार करने को। किसी चीज़ या सिस्टम को पार करना, उसे लाँघना 'क्रान्ति' हुई। फिर जब इसी क्रान्ति में 'सम्' लग गया पहले, तो यह 'संक्रान्ति' हो गयी। प्रॉपर या अभीष्ट क्रान्ति को आप संक्रान्ति कहते हैं।

मकर संक्रान्ति में सूर्य धनु राशि को पार करके मकर में प्रवेश करता है। यह जाड़े को लाँघकर गर्मी में प्रवेश करना है। शास्त्रों के अनुसार, दक्षिणायण को देवताओं की रात्रि अर्थात् नकारात्मकता का प्रतीक तथा उत्तरायण को देवताओं का दिन अर्थात् सकारात्मकता का प्रतीक माना गया है। सामान्यत: सूर्य सभी राशियों को प्रभावित करते हैं, किन्तु कर्क व मकर राशियों में सूर्य का प्रवेश धार्मिक दृष्टि से अत्यन्त फलदायक है। यह प्रवेश अथवा संक्रमण क्रिया छ:-छ: माह के अन्तराल पर होती है।

भारत देश उत्तरी गोलार्ध में स्थित है। मकर संक्रान्ति से पहले सूर्य दक्षिणी गोलार्ध में होता है अर्थात् भारत से अपेक्षाकृत अधिक दूर होता है। इसी कारण यहाँ पर रातें बड़ी एवं दिन छोटे होते हैं तथा सर्दी का मौसम होता है। किन्तु मकर संक्रान्ति से सूर्य उत्तरी गोलार्द्ध की ओर आना शुरू हो जाता है। अतएव इस दिन से रातें छोटी एवं दिन बड़े होने लगते हैं तथा गरमी का मौसम शुरू हो जाता है। दिन बड़ा होने से प्रकाश अधिक होगा तथा रात्रि छोटी होने से अन्धकार कम होगा। अत: मकर संक्रान्ति पर सूर्य की राशि में हुए परिवर्तन को अंधकार से प्रकाश की ओर अग्रसर होना माना जाता है।

प्रकाश अधिक होने से प्राणियों की चेतनता एवं कार्य शक्ति में वृद्धि होगी। ऐसा जानकर सम्पूर्ण भारतवर्ष में लोगों द्वारा विविध रूपों में सूर्यदेव की उपासना, आराधना एवं पूजन कर, उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की जाती है।

मकर संक्रान्ति से लेकर कर्क संक्रांति के बीच छः मास के समय अंतराल को उत्तरायण कहते हैं। उत्तरायण का अभिप्राय है - (उत्तर + आयण = उत्तरायण) उत्तर में आना। अर्थात् सूर्य का उत्तर में आना (सूर्य का ठीक पूर्व दिशा से न निकलकर थोडा उत्तर दिशा से निकलना) इसके विपरीत कर्क संक्रांति से लेकर मकर संक्रांति के बीच के छः मास के काल को दक्षिणायन कहते हैं।

उत्तरायण का आरम्भ १४ या १५ जनवरी को होता है। जब सूर्य देवता मकर राशि में प्रवेश करते हैं। दक्षिणायन का आरम्भ १४ जुलाई को होता है। सामान्यत: भारतीय पंचांग पद्धति की समस्त तिथियाँ चन्द्रमा की गति को आधार मानकर निर्धारित की जाती हैं, किन्तु मकर संक्रान्ति को सूर्य की गति से निर्धारित किया जाता है। इसी कारण यह पर्व प्रतिवर्ष १४ जनवरी को ही पड़ता है। ऐसी मान्यता है कि इस दिन भगवान् भास्कर अपने पुत्र शनि से मिलने स्वयं उसके घर जाते हैं। चूँकि शनिदेव मकर राशि के स्वामी हैं, अत: इस दिन को मकर संक्रान्ति के नाम से जाना जाता है।

महाभारत काल में भीष्म पितामह ने अपनी देह त्यागने के लिये मकर संक्रान्ति का ही चयन किया था। मकर संक्रान्ति के दिन ही गंगाजी भगीरथ के पीछे-पीछे चलकर कपिल मुनि के आश्रम से होती हुई सागर में जाकर मिली थीं। सूर्य देव के उत्तरायण में प्रवेश करने के उपलक्ष्य में हिंदुओं द्वारा मकर संक्रांति का पर्व विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न नाम से मनाया जाता है।

बहुत दूर डूबी पदचाप

धनञ्जय सिंह

गीतों के
मधुमय आलाप
यादों में जड़े रह गये
बहुत दूर
डूबी पदचाप
चौराहे पड़े रह गये!

देख-भाल
लाल-हरी बत्तियाँ
तुमने सब रास्ते चुने
झरने को
झरीं बहुत पत्तियाँ
मौसम
आरोप क्यों सुने।

वृक्ष देख
डाल का विलाप
लज्जा से गड़े रह गये।

तुमने
दिनमानों के साथ-साथ
बदली हैं केवल तारीखें
पर
बदली घड़ियों का व्याकरण
हम किस महाजन से सीखें।

बिजली के
खम्बे से आप
एक जगह खड़े रह गये!

वह देखो
नदियों ने बाँट दिया
पोखर के गड्ढों को जल
चमड़े के टुकड़े बिन
प्यासा है
आँगन-चौबारे का नल।

नींदों के
सिमट गए माप
सपने ही बड़े रह गये!

महर्षि दयानंद का सत्यार्थ प्रकाश तथा अन्य साहित्य : एक विश्लेषण

पद्मश्री डॉ. श्यामसिह शशि

(लेखक परिचय : बहुमुखी प्रतिभा के धनी डॉ. श्याम सिंह शशि ने गुरुकुल काँगड़ी हरिद्वार के परिवेश में न केवल अपनी स्कूली शिक्षा कक्षा ८ से कक्षा १० तक प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की व कालांतर में आगरा विश्वविद्यालय से एम. ए., पी-एच. डी, (समाज विज्ञान), दिल्ली विश्व विद्यालय से अनुवाद पाठ्यक्रम आदि में प्रथम स्थान, इंग्लैंड से पीजी – प्लानिंग – मैनेजमेन्ट आदि कोर्स भी किए, जहाँ भारतवंशी रोमा डायसपोरा पर डी लिट् के लिए यायावरी शोध-यात्राएँ भी कीं। इसी दौरान उन्होंने भारतीय संस्कृति पर अँग्रेजी में प्रकाशित लघु पुस्तिकाएँ विद्वत्-वर्ग में वितरित कीं। ७५ देशों के विश्व यात्री डॉ. शशि को भारत सरकार ने उच्च राष्ट्रीय अलंकरण पद्मश्री हिन्दी तथा अँग्रेजी साहित्य में वर्ष १९९० में अलंकृत किया। उन्होंने हिन्दी-अँग्रेजी में ५०० ग्रन्थों-पुस्तकों का प्रणयन किया जिनमें कुछ उल्लेखनीय हैं - अँग्रेजी विश्वकोष - Encyclopaedia Indica – 200 volumes, "Roma -The Gypsy World", Nomads Of India (National Trust Pub.), हिन्दी – २५ कविता संग्रह व "अग्निसागर" महाकाव्य, बाल-साहित्य (२५ पुस्तकें), रोमा पुत्री के नाम (यायावरी उपन्यास) आदि पुस्तकों के अतिरिक्त डॉ. शशि के साहित्य पर अनेक शोध-ग्रंथ लिखे गए हैं और बहुत से प्रकाशित भी हैं। - सम्पादक)

महर्षि दयानंद सरस्वती ने अपने कालातीत ग्रंथ "सत्यार्थ प्रकाश' में लिखा है – "मेरा इस ग्रंथ को बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य अर्थ का प्रकाश करना है। अर्थात् जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिवादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है....विद्वान् का यही मुख्य काम है कि उपदेश व लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, तत्पश्चात् वे स्वयं अपना हिताहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनंद में रहें।"

आज जब देश विकास की राह पर दौड़ रहा है, महर्षि दयानंद की २०० वीं जयंती का उद्घाटन करते हुए भारत के प्रधामन्त्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी ने हाल ही में कहा था कि लोग अधिकार की बात करते हैं, कर्तव्य की नहीं", अगर २१वीं सदी में मेरे साथ ऐसा है तो डेढ़ सौ साल पहले सोचिए कि समाज को रास्ता दिखाने में स्वामी दयानंद सरस्वती को किस तरह की मुश्किलों का सामना करना पड़ा होगा।....उनका उद्देश्य गरीबों, पिछड़ों और वंचितों की प्राथमिकता पर सेवा करना है।"

इसी संदर्भ में नेता जी सुभाष चंद्र बोस का एक कथन भी हिन्दुत्व की विचारधारा पर प्रकाश डालता है। नेता जी ने आर्य समाज तथा रामकृष्ण मिशन पर टिप्पणी की है। वे कहते हैं, "स्वामी दयानंद सरस्वती उन महापुरुषों में से थे, जिन्होंने आधुनिक भारत का निर्माण किया और जो उनके आचार – सम्बन्धी पुनुरुत्थान तथा तथा धार्मिक पुनुरुद्धार के उत्तरदाता हैं। हिन्दू समाज का उद्धार करने में आर्यसमाज का बहुत बड़ा हाथ है। रामकिशन मिशन ने बंगाल में जो कुछ किया उससे कहीं अधिक आर्यसमाज ने पंजाब और संयुक्त प्रांत में किया।"

मैं जब आर्य मिडिल स्कूल बहादुराबाद में कक्षा ५ में पढ़ता था, वैदिक प्रार्थना "ॐ विश्वानि देव...." से लेकर स्वस्तिवाचन, शांति प्रकरण, संध्या मंत्र, यजुर्वेद का चालीसवाँ अध्याय अपनी पाठ्य पुस्तकों के पारायण के साथ-साथ कंठस्थ कर लिया था। गणित, हिन्दी, अँग्रेजी, संस्कृत, उर्दू आदि भाषाओं का कुछ ज्ञान भी प्राप्त कर लिया था। सत्यार्थ प्रकाश, बाल पुस्तकें – व्यवहारभानु, आर्योद्देश्य रत्नमाला, गोकरुणानिधि संस्कारविधि आदि पुस्तकें पठनीय हैं।

भारतीय साहित्य धार्मिक विचारों से भक्ति मार्ग तक का पथ प्रशस्त करता है जिसे मॉरीसस, सूरीनाम, फीजी, वेस्ट इंडीज और देश-विदेश में रामचरितमानस, गीता, हनुमान् चालीसा व भारतीय भाषाओं के धार्मिक ग्रंथ गिरमिटिया प्रवासी भारतीयों की आत्मा की भूमिका का निर्वहन करते रहे हैं; भले ही स्वामी दयानंद ने इस

काल के अंधविश्वास तथा सामाजिक बुराइयों के उन्मूलन के लिए उन्होंने स्पष्ट शब्दों में संदेश देकर कुछ वर्गों को नाराज भी किया, फिर भी उन्हें जन-समर्थन कम नहीं मिला।

उपर्युक्त कतिपय प्रसंगों में हम स्वामी दयानंद सरस्वती जयंती के अवसर पर पूर्वाग्रहों से उनके लेखन – प्रवचन एवं राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में योगदान के बारे में काल-चिंतन नितांत अपेक्षित है। स्वामी जी ने स्वयं अपनी आत्मकथा में बहुत-से तथ्यों को छोड़ दिया है तथा सन्यासी होने के कारण बड़बोलेपन से भी मुक्त रहे हैं। उनके ग्रंथ "सत्यार्थ प्रकाश" में चौदह समुल्लासों में मानव जीवन की वे सभी मान्यताएँ अपने ढंग से प्रकट हुई हैं जिनसे कतिपय कट्टरपंथियों को कष्ट होना स्वाभाविक है, पर उन्होंने इस ग्रंथ में जो भी लिखा है वह विषय के अनुरूप है। उनकी जीवनियों में कुछ लेखकों ने सम्भवत: पूर्णतया न्याय नहीं किया है। शायद मेरे भारत सरकार के निदेशक के रूप में भी वांछित सामग्री के अभाव में उनकी जीवनियों के गहन समाज वैज्ञानिक शोध भी अधूरे ही कहे जाएँगे। इस सम्बन्ध में मेरे एक शोधपरक लेख में "सत्यार्थ प्रकाश : एक समाज वैज्ञानिक दृष्टि" से यहाँ कुछ तथ्यों का उल्लेख करना सटीक लगता है – मैंने कहा था कि स्वामी जी ने ना तो किसी नये धर्म की स्थापना की और ना ही किसी गुरुडम को बढ़ावा दिया। इस ग्रंथ को यदि पाँचवें वेद की संज्ञा दी जाए तो उससे वेद शब्द का विस्तार ही होगा, जिसका अर्थ ज्ञान होता है। हम इसे वेद की पृष्ठभूमि पर आधारित ज्ञान की समालोचना – प्रत्यालोचना भी कह सकते हैं। यह ज्ञान ही आनंद है जिसे महर्षि ने "सत्यार्थ प्रकाश" में गागर में सागर की तरह भरकर हिन्दी में लिखा, अपनी मातृभाषा गुजराती अथवा पांडित्य भाषा संस्कृत में नहीं। अलबत्ता यह सरल हिन्दी में होने के कारण यह ग्रंथ देश में सर्वसाधारण पाठकों तक पहुँचा, इसका आधार ज्ञान-मार्ग होने के कारण भक्ति-मार्ग के पाठकों को बहुत आकर्षित नहीं कर सका। ईश्वर की व्याख्या करते समय उसके सौ नामों में "ॐ" को सर्वाधिक महत्व देना उनके समाज वैज्ञानिक विश्लेषण का परिचायक है।

इन पंक्तियों के लेखक ने "सत्यार्थ प्रकाश" को पण्डित गुरुदत्त की तरह चौबीस बार तो नहीं पढ़ा किन्तु मैंने जिस आयु में जब भी इस ग्रंथ को प्रणाम किया तो अनेक नये तथ्य प्राप्त हुए हैं। युग पुरुष की इस महान् कृति के लिए शत-शत नमन।

और अंत में महर्षि दयानंद के जीवन पर आधारित एक पुरानी रचना, "विष पीकर तुम हो गए अमर" जो नव भारत टाइम्स नई दिल्ली में, १३ अप्रैल १९७५ को प्रकाशित हुई थी।

"विष पीकर हो गए अमर"

हे देव, दया के महामनुज!
विष पीकर तुम हो गए अमर!
तुम ज्ञान पताका लेकर हाथ में
धरती पर जब उतरे ऋषिवर,
तम फटा, बिखर आलोक गया
वैदिक वाणी के पाकर स्वर,
तुमने सच्चा शंकर ढूँढा –
यौवन के "शंकर" को खोकर,
हे देव, दया के महामनुज!
विष पीकर तुम हो गए अमर।
हे नव्य समाज के दिव्य जनक,
युग-पुरुष लोक के निर्माता,
पाकर तुमको यह देश जगा,
हो गयी धन्य धरती माता,

तुमने जो सतपथ दिखलाया
चल पड़े करोड़ों पग उस पर,
हे देव, दया के महामनुज!
विष पीकर तुम हो गये अमर।
तुम चले जिधर बढ़ चले अभय
जंगल बीहड़ या नद-नाले,
हिम कौशल रोकते राहों में
थे वन्य पशु घेरा डाले,
कंकर-कंकर पर काँटे या
खाने को मिलते थे पत्थर,
हे देव, दया के महामनुज!
विष पीकर तुम हो गये अमर।
महर्षि, तुम्हारे अपने घर
विघटन की आग धधकती है,
'कृण्वंतो विश्व-मार्यम्' की
वेदी में होली जलती है,
हो गये विवेक नियम अंधे-
दो ज्ञान, दया-आनंद आकर,
हे देव, दया के महामनुज!
विष पीकर तुम हो गये अमर,
विष पीकर तुम हो गये अमर।

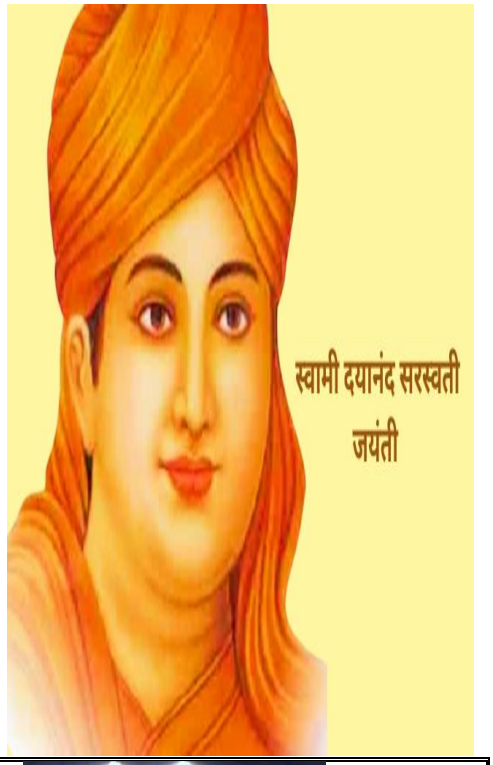

प्रश्नवाचक समय

धर्मपाल महेंद्र जैन

मैं समय हूँ
तिकड़मों का समय
टूटे सम्वाद का समय
चुप्पी का समय
या फिर जुल्म से जन्मी
जय-जयकार का समय
पर मैं समय हूँ
चीख़-चिल्लाहटों का समय
लूटपाट का समय
मरने-मारने का समय
गुंडागर्दी-धोखेबाजी का समय
या फिर बुल्डोजर का समय
पर मैं समय हूँ
मुग़ालते का समय
छल-कपट का समय
अंधी वैचारिकता का समय
संकीर्णता का समय
या फिर असहमति का समय
मैं समय हूँ
प्रश्नवाचक समय।

बदलते परिवेश में हिंदी का नया स्वरुप

संतोष बंसल

जिस प्रकार यह कहा जाता है कि साहित्य समाज का दर्पण होता है, भाषा के विषय में भी यही कहा जा सकता है कि वह अपने समय का आईना होती है। वस्तुतः नयी सदी की शुरुआत में 'ग्लोबलाइजेशन' या वैश्वीकरण ने दुनिया के तमाम देशों के लोगों को एक-दूसरे के नजदीक ला दिया, तो कंप्यूटर और इंटरनेट ने उन्हें सम्प्रेषण का तीव्रतर माध्यम दिया। इसके साथ सोशल मीडिया और स्मार्ट फ़ोन ने अभिव्यक्ति का नया मंच प्रदान करने के साथ लोगों की दुनियावी दूरियाँ मिटा दीं। भारत में भी 'डिजिटल इंडिया' के प्रारूप के साथ जितनी तेजी से मोबाइल या स्मार्ट फ़ोन का इस्तेमाल हुआ, उससे गाँवों का शहरों से और शहरों का 'मेट्रो सिटीज़' से सम्पर्क शुरू हो गया। यह सम्पर्क देश के लोगों का दुनिया के अन्य देशों में रहने वाले प्रवासी भारतीयों के साथ-साथ वहाँ के विदेशियों से भी हुआ। मैंने स्वयं अपने अमेरिका प्रवास के दौरान देखा कि बड़े-बड़े मॉल्स के 'काउंटर' पर खड़े होकर हिसाब-किताब जोड़ने वाले व्यक्ति हिंदी में हमारा अभिवादन और हमसे वार्तालाप करने की कोशिश कर रहे थे। इस प्रकार विदेशो में 'इंडियंस' की बहुतायत मात्रा में रिहाईश और 'इंडिया' के बाजार में बड़े-बड़े 'ब्रांडस' की बढ़ती खपत ने भी हिंदी का बड़ी तेजी से प्रचार और प्रसार किया। और पिछले दिनों हिंदी के कुछ शब्दों को अँग्रेजी भाषा की एक डिक्शनरी का हिस्सा बनाया गया तो हिंदी के लोगों को लगा कि हिंदी अब विश्व स्तर पर आगे बढ़ रही है। इन सब स्थितियों और परिस्थितियों का साहित्य, भाषा और संस्कृति पर भी असर हुआ, ऐसे में हिंदी भाषा पर कैसा और क्या प्रभाव पड़ा? उसका रूप कितना बदला ? वह क्या एक 'नयी वाली हिंदी' है? जिसे हम 'आज की हिंदी' कहकर सम्बोधित कर रहे हैं। यह हम हिंदी भाषा के इतिहास के साथ वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उसके स्वरूप की जाँच करेंगे, तभी निष्कर्ष सामने उपस्थित होगा।

अपने प्रारूप में भाषा के रूप में हिंदी के वास्तविक अस्तित्व में आने का समय एक हजार ईसवीं ही माना जा सकता है, जो कि हिंदी साहित्य के आरम्भ होने का भी काल है। प्रारम्भ में हिन्दुई या हिन्दवी शब्दों का प्रयोग प्राचीन हिंदी के लिए प्रयुक्त हुआ है, किन्तु तेरहवीं सदी में अमीर खुसरों ने इसका हिंदी शब्द प्रयोग किया। वस्तुतः हम हिंदी, उर्दू और हिन्दुस्तानी नामों का प्रयोग जिन भाषा रूपों के लिए करते हैं, व्याकरणिक स्तर पर वे एक ही हैं। इस भाषा में जब बोलचाल के शब्दों का प्रयोग होता है तो उसे बोलचाल की हिंदी या हिन्दुस्तानी कहते हैं, और इनके साथ जब संस्कृत के कठिन तत्सम शब्दों का काफी प्रयोग होता है तो उसे साहित्यिक हिंदी कहते हैं एवं जब उन शब्दों के साथ अरबी, फारसी, तुर्की के शब्दों का प्रयोग होने लगता है तो उसे उर्दू कहते है। मिर्जा ग़ालिब ने भी अपने पत्रों में कई स्थानों पर हिंदी-उर्दू को समानार्थी रूप में प्रयुक्त किया है, यह तो बाद में अँग्रेजों की भाषा नीति के कारण दोनों को अलग-अलग भाषाएँ माना जाने लगा तथा उर्दू को मुसलमानों से जोड़ दिया और हिंदी को हिन्दुओं से। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से जिस हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ में प्रमुख स्थान दिलाने की बात होती है, वह आज हिंदी प्रदेशों की सरकारी भाषा है। और जो पूरे भारत की राजभाषा है एवं समाचारपत्रों और फिल्मों में जिसका प्रयोग होता है, वही भाषा हिंदी-प्रदेश में शिक्षा का माध्यम है और जिसे 'परिनिष्ठित हिंदी, 'मानक हिंदी' के नामों से भी अभिहित करते हैं। इस प्रकार अपने परिवेश और जरूरत के अनुसार इसके नामों में विशेषण जुड़ता या बदलता रहा है। वस्तुतः किसी भी क्षेत्र का आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक बदलाव उसकी भाषा में भी परिलक्षित होता है और सही भाषा वही होती है जो अपने परिवेश से पैदा होती है। यही तथ्य हिंदी भाषा पर लागू होता है, क्योंकि 'वर्चुअल टाइम' के बदलते परिवेश ने उसका स्वरुप बदला है और उसे आज विभिन्न नए नामों से पुकारा जा रहा है। कोई उसे 'ग्लोबल हिंदी' नाम देता है और कई विद्वान उसे 'आज की हिंदी' या 'नयी वाली हिंदी' कहकर सम्बोधित कर रहे हैं।

वैसे आज से डेढ़ सौ वर्ष पूर्व हिंदी साहित्य के आधुनिक काल के प्रारम्भ में ही साहित्य में नए युग के सूत्रधार भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने लिखा, 'हिंदी नयी चाल में ढली' जबकि उस समय 'खड़ी हिंदी 'अपने पाँव पर खड़े होने के लिए अपनी लिपि का सहारा ले रही थी। यही वह दौर था जब १८५७ की क्रांति के बाद कम्पनी राज का प्रभुत्व हो गया था और धीरे धीरे अँग्रेजी के शब्द हिंदी भाषा में आ रहे थे। यही वह वक्त था जब आर्य समाज के प्रचार-प्रसार के कारण तत्सम शब्दों का प्रयोग बढ़ा और छायावाद तक आते-आते हिंदी 'परिनिष्ठित हिंदी' में निखर गयी। जयशंकर प्रसाद, महाकवि निराला, पंत और महादेवी वर्मा का पूरा साहित्य इस दृष्टि से दर्शनीय है और इसके बाद प्रगतिवादी आंदोलन के कारण तद्भव शब्दों के प्रयोग में वृद्धि हुई। स्वतंत्रतता प्राप्ति के बाद हिंदी के शब्द भण्डार को पारिभाषिक शब्दों की बहुत आवश्यकता पड़ी, क्योंकि वह तब विज्ञान, वाणिज्य और विधि की भी भाषा हो रही थी। जिसकी पूर्ति के लिए अनेक शब्द अँग्रेजी और संस्कृत से लिए गए और अनेक नए शब्द बनाये गए। आठवें दशक में कम्प्यूटर और माइक्रोसॉफ्ट के आने के बाद और 'आई टी' इंडस्ट्री के विकास के साथ ही बहुत से नए तौर-तरीके जीवन में शामिल होने के साथ ही इस 'फील्ड' से सम्बंधित शब्द अनायास ही हमारी भाषा में सम्मिलित हो गए। और 'विजुअल मीडिया' के उत्तरोत्तर विकास के साथ इसकी शब्दावली भी विकसित होती जा रही है। इस प्रकार तब से आज तक जहाँ साहित्य में अनेक विधाओं और रूपों में हिंदी समृद्ध होती गयी, वहीं हम हिंदी भाषा को उसका उचित सम्मान और स्थान दिलाने के लिए भी प्रयत्न रत रहे। वास्तव में "किसी भाषा के प्रचार क्षेत्र में जैसे-जैसे विस्तार होता है, उसके एकाधिक रूप विकसित होने लगते हैं।" (डॉक्टर भोला नाथ तिवारी - हिंदी भाषा : उद्भव, विकास और स्वरुप) (हिंदी साहित्य का इतिहास - सम्पादक डॉक्टर नगेंद्र)

यह सच है कि समाज में परिवर्तन के साथ ही साहित्य की संस्कृति में बहुत बदलाव आया और हिंदी के प्रति अन्य क्षेत्रों के लोगों का भी रुझान होने लगा क्योंकि अभिव्यक्ति की गहनता और सुघढ़ता उसकी अपनी भाषा या मातृभाषा में ही सहज और सरल होती है। हिंदी में लिखने वाले पहले जहाँ हिंदी विभागों, पत्रकारिता और हिंदी से जुड़े संस्थानों से आते थे, वहीं अब इंजीनियरिंग, मैनेजमेंट और ज्ञान-विज्ञान के दूसरे क्षेत्रों के लोगों का भी जुड़ाव हुआ है। और उनके अनुभवों का दायरा और नयापन न केवल हिंदी साहित्य को, बल्कि हिंदी भाषा को भी समृद्ध कर रहा है, क्योंकि उनके लेखन में उनके भावों और विचारों के साथ उस व्यवसाय से जुड़े तकनीकी और यांत्रिक शब्दों की भी प्रविष्टि हुई है। इसके अतिरिक्त साहित्य कविता-कहानी तक सीमित न रहा, उसमें आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण, यात्रा वृत्तांत और मनोविज्ञान, समाज विज्ञान जैसे तमाम विषयों की नयी विधाएँ शामिल हुईं। और फिर सोशल मीडिया के जीवन में प्रवेश के साथ ही इस मंच के तमाम माध्यम ब्लॉग, गूगल, फेस बुक, व्हाट्सअप, यू-ट्यूब, इंस्टग्राम आदि ने अभिव्यक्ति को एक खुला मंच प्रदान किया, जहाँ न कोई रोक टोक है, न प्रकाशक और सम्पादक का दखल या निर्णय। इस तरह दो हजार तीन में इंटरनेट पर जिस डिजिटल हिंदी लेखन की शुरुआत हुई थी, उसका २०२२ तक आते-आते इस तरह विकास हुआ कि अब वह पहचान में ही नहीं आती ।अब इस 'डिजिटल हिंदी' को किस खाँचे में रखा जाए? यह हम आगे तय करेंगे। इनके साथ ही ईमेल और ईबुक की दुनिया का भी विस्तार हुआ, जिससे पुस्तकालय संस्कृति तो ख़त्म नहीं हुई, ऑनलाइन पठन और पुस्तक खरीद का रास्ता खुल गया । इन सबका फायदा यह हुआ कि अब अँग्रेजी के वर्चस्व के आगे हिंदी वाले अपनी पुरानी हीनता बोध से मुक्त हो गए हैं । इसी के साथ भूमण्डलीकरण के कारण विश्व के अलग-अलग देशों के लोग एक-दूसरे के पास आ रहें हैं, तो उनकी भाषाएँ भी पास आ रही हैं । विदेशी विद्वानों के साथ ही प्रवासी भारतीयों ने भी दूसरे देशों में जाकर हिंदी लेखन को पत्रकारिता और अनुवाद के माध्यम से समृद्ध किया। इससे एक तो उनकी स्थानीय संस्कृति से हिंदी समाज अवगत हुआ, दूसरे वहाँ की भाषा के भी कुछ शब्द अनायास ही हिंदी में आ गए। लगभग यही स्थिति भारत में भी हुई जहाँ हिंदी साहित्य का अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ, वहीं अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के लेखकों के साहित्य के हिंदी अनुवाद में उनकी संस्कृति एवं भाषा के लोक शब्द भी हिंदी में आये। इस तरह राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय

स्तर पर अनुवाद ने हिंदी भाषा के अनुभव और शब्द भण्डार में उत्तरोत्तर वृद्धि की है । इसके साथ सिनेमा और हिंदी न्यूज़ चैनलों के विस्तार ने हिंदी भाषा का रुख और रूप बदलने में अहम् भूमिका निभाई है। जहां हिंदी फिल्मों की लोकप्रियता से उनकी ख़ास बम्बई शैली ने देश -विदेश में अपनी धमक दिखाई, तो उसकी वही मुंबइया भाषा और 'डॉयलॉग' अच्छे खासे लोकप्रिय हुए, जिसने साहित्यिक हिंदी के समानांतर अपनी धाक जमाये रखी। और फिलहाल हिंदी साहित्य से सिनेमा का रिश्ता फिर से मजबूत हुआ है, जो कि बीच में कुछ टूट सा गया था। टेलीविजन की हिंदी ख़बरों में भी हिंदी भाषा अपने अँग्रेजी-मिश्रित स्वरूप में सामने आयी और बीच में चलने वाले विज्ञापनों में वर्तनी की अशुद्धता के बावजूद इस भाषा का बाजारीकरण हुआ। इस प्रकार हिंदी भाषा सभी टीवी चैनलों की स्क्रीन पर निरंतर चल रहे 'एडवर्टाइज़मेंटस' की बेजोड़ कमाई के साथ, सामाजिक समस्याओं पर लगातार बनने वाली 'डाक्यूमेंट्री 'फिल्मों की कलात्मक प्रस्तुति का सरल साधन भी बन गयी।

इस प्रकार देश-दुनिया में परिवेश के परिवर्तन और वक्त के बदलाव के साथ, इनके प्रभाव स्वरूप हिंदी में भी नयापन आया है। लेकिन प्रश्न यह उठता है कि क्या यह परम्परा से अलग कोई नयी हिंदी है? इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि बेशक युवा पीढ़ी के बहुत से लेखक हिंदी के मुकाबले अँग्रेजी लेखन के ज्यादा निकट हैं और उनमें वैश्विक सम्वेदना के साथ ही बदला हुआ माहौल भी परिलक्षित होता है। लेकिन इस बदली हुई सम्वेदना में नयी पीढ़ी सम्बन्धों को लेकर सुविधा और सहूलियत को तलाशती है और जिस परम्परागत 'प्रेम' को हम रिश्तों की बुनियाद मानते थे, वहाँ वह उसकी नयी उपभोक्ता वादी परिभाषा गढ़ती है। वे जहाँ लैंगिक समानता को लेकर ज्यादा सम्वेदनशील हैं, वहीं भूमंडलीय सूचना क्रान्ति के कारण सम्वेदना की जगह सूचना ने ले ली है। और सम्बंधों में स्थायित्व समाप्त होने के साथ, लेखन में ठहराव और गहनता का भी लोप होता जा रहा है। टेकनोलॉजी और रफ़्तार के साथ यह 'मोबाइल जेनरेशन' इश्क वाला लव करती है और ब्रेकअप का भी जश्न मनाती है। इस पीढ़ी की शब्दावली में 'ओपन रिलेशनशिप' है तो 'लिव इन रिलेशन' भी।इस प्रकार मोबाइल फ़ोन ने नयी पीढ़ी के जीने का तरीका ही नहीं बदला, बल्कि लेखन की दुनिया भी शब्दों से खिसककर सांकेतिक चिन्हों, तस्वीरों पर आकर टिक गयी है। सोशल मीडिया में 'लाइक' और 'कमेंट' के साथ 'स्माइलीज' और 'इमोटिकॉन्स' की बहुत बड़ी दुनिया है, जिनके सहारे अपने सन्देश और प्रतिक्रिया को आसानी से प्रकट किया जा सकता है। डिजिटल हो गए समय में शब्दों की जगह 'इमोजी' या फिर फोटो लगाने का चलन बढ़ गया है। एक युवा मीडिया विश्लेषक के अनुसार, "लेखन जो कि अभिव्यक्ति और पहचान की प्रक्रिया का हिस्सा रहा है, मोबाइल ने उसे संख्या बल और गणितय आंकड़े का पर्याय बना दिया है। यह गणित हमारी-आपकी भाषा को, लिखे-कहे जाने के तरीके को, शब्द और सामग्री के चुनने की रणनीति पर सीधा असर डालता है।" (श्री विनीत कुमार -'यहाँ भाषा कहन का नहीं, हरकत का मामला है' लेख, कादम्बनी पत्रिका अंक सितम्बर २०१९)

वास्तव में यह समय 'विजुअल एक्सप्लोजन' का है, जिसमें अब सबको 'विजुअल कम्यूनिकेशन' यानी चित्रों के माध्यम से सम्वाद करने की आदत पड़ती जा रही है। आज हम फोटोग्राफ खींचने और उसे लोगों तक पहुँचाने की होड़ में इस तरह शामिल हो गए हैं कि हम बहुत से शब्दों को बिसरते जा रहें हैं। इंटरनेट पर नजर रखने वाली एजेंसियों के आँकड़े के अनुसार फेसबुक पर प्रतिदिन तीन सौ मिलियन फोटोग्राफ अपलोड किये जा रहे हैं। एवं इंस्टाग्राम पर तो पाँच सौ मिलियन लोग हर दिन सक्रिय रहते हैं और फोटो-दर-फोटो सम्वाद करते हैं। अब दुनिया फोटो-ज्वर की शिकार हो गयी है और सबसे बड़ी बात यह है कि भारतीयों की औसत हिस्सेदारी सबसे अधिक है। तस्वीरें और इमोजी अब लोगो को रेडीमेड अभिव्यक्ति के नए विकल्प दे रही हैं और यह तय है कि हमारे कहने-समझने और खासकर कुछ भी अभिव्यक्त करने के तरीकों में तेजी से बदलाव आ रहा है। जबकि इससे पहले अपनी बात कहने-लिखने का माध्यम पत्र और खत होते थे, जिनमें शायरी और कविताओं का इस्तेमाल होता था । चिट्ठियाँ तो बहुत पहले ही लिखनी और पढ़नी छोड़ दी गयी थीं, अब यात्राओं में पत्रिकाओं के पढ़ने की परम्परा का स्थान भी स्मार्टफोन की स्क्रीन ने ले लिया है। एक विद्वान के अनुसार, "डिजिटल

टेक्नोलॉजी" ने बोलने-बतियाने का हमारा प्यारा शगल ही छीन लिया है। हमारा बाजार, हमारा खाना, हमारी दवाई, हमारी पढ़ाई, हमारा बैंक - सब कुछ हमारे स्मार्टफोन पर सिमट-सा गया है। अब हम में से ज्यादातर लोग रेल टिकट बुक कराने या बिजली-पानी का बिल भुगतान करने वाली लाइनों का हिस्सा नहीं होते। उन लाइनों में लगकर आपस में बोलने-बतियाने का सुख हमसे छिन-सा गया है।" (श्री धनञ्जय चोपड़ा, सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज, इलाहाबाद विश्वविधालय - लेख - 'विजुअल एक्सप्लोजन के समय शब्दों की भूमिका' हिंदी हिन्दुस्तान अखबार)

इस प्रकार देश और दुनिया के बदलते माहौल में सोशल मीडिया पर इमोजी और फोटोज़ का इस्तेमाल हमारी भाषा को तेजी से बदल रहा है, उसमें शब्दों की गूँज कहीं खोती जा रही है। ऐसे में हिंदी भाषा में बदलाव के साथ एक नयी आशंका सर उठा रही है कि हम कहीं 'शब्द संकोच' की स्थिति की ओर तो धकेले नहीं जा रहे? जिसमें हमारे शब्द या तो ख़ारिज कर दिए जा रहे हैं या फिर बेमानी करार दिए जा रहे हैं। अगर देखा जाए तो यह चिंता प्रत्येक भाषा के लिए ही है, क्योंकि सोशल मीडिया के फलक से प्रसारित और दुनिया में बड़े-बड़े बदलाव लाने वाली शब्द सत्ता तकनीक के रास्ते पर जाकर कहीं अपनी ताकत तो नहीं खो देगी? यह प्रश्न विद्वानों के लिए विमर्श का है। इसके उत्तर में यह बताना उचित होगा कि हिंदी में 'डिजिटलीकरण' की रफ़्तार प्रत्येक विधा में तेज गति से बढ़ रही है। मीम्स, फोटोशॉप, एम्बेडेड विडियो, क्लिप्स, हैश टैग, टैगलाइन, सुपर- जैसे अन्य दर्जनों तरीके हैं, जिनमें डिजिटल या सोशल मीडिया पर हिंदी दिखाई देती है। एवं इंटरनेट पर डेढ़ दशक पहले जो हिंदी की शुरुआत हुई थी, उसमें तब से अब तक बहुत विस्तार हुआ है। सोशल मीडिया ने लेखकों की नयी जमात पैदा कर दी है, जो साहित्य से लेकर डिजिटल दुनिया की अन्य विधाओं में भी लेखन के नए आयाम गढ़ रहें हैं। गूगल भी इसके आँकड़े पेश कर रहा है कि डिजिटल प्लेटफॉर्म पर हिंदी का भविष्य अँग्रेजी एवं बाकी भाषाओं से कहीं ज्यादा उज्ज्वल है। इसका एक अर्थ यह हुआ कि अकादमिक और सामाजिक हैसियत से जो हिंदी तेजी से पिछड़ती जान पड़ती है, राजस्व एवं व्यवसायिक दृष्टि से यहाँ उसका तेजी से विस्तार हो रहा है। और जिस भाषा के भीतर जब राजस्व की सम्भावना बढ़ेगी, तो सामाजिक हैसियत का भी समीकरण बदलेगा।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हिंदी भाषा का विस्तार विभिन्न क्षेत्रों में तेजी से बढ़ रहा है और वह प्रत्येक स्थान पर अपने नए कलेवर में नजर आती है। यानी कि यह उसकी क्षमता और सामर्थ्य है कि साहित्य, सिनेमा या सोशल मीडिया, सब जगह विषय के अनुकूल उसका रूप-स्वरुप दिखता है। एवं जो युवा पीढ़ी का लेखन 'नयी हिंदी' या 'आज की हिंदी' के नाम से पुकारा जा रहा है, वास्तव में यह हिंदी बोलचाल वाली एवं आसान शब्दावली लिए है। इसमें आम जीवन में इस्तेमाल होने वाले नए-पुराने शब्द शामिल हैं एवं जो आज की पीढ़ी ने पढ़ी कम है, लेकिन सुनी और बोली जरूर है। वैसे कोई ही भाषा नयी या पुरानी नहीं होती, वह विषय और विधा के अनुसार प्रयुक्त होती है। जैसे उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद अपने पात्र और परिवेश के अनुकूल एक ही समय में अलग-अलग हिंदी लिखते थे। अब सवाल यह है कि वर्तमान युग में डिजिटल हिंदी को किस खाँचे में रखें ? जिसमें अँग्रेजी के बहुत से शब्द दाखिल हो गए हैं। लेकिन यह शब्दों की प्रविष्टि का मामला तो बहुत पुराना है, जिसके कारण समय-समय पर हिंदी भाषा दिनोंदिन अपने शब्द-भण्डार में विस्तृत और विशाल हो गयी है। तो क्या लेखन में हिंदी का यह वर्चुअल रूप नया है ? या इसे हिंदी का बहुरंगी स्वरूप कहा जाए ? वास्तव में "कोई भी भाषा इतनी इकहरी नहीं होती कि उसे नयी और पुरानी के खाँचों में बाँट दिया जाए। लेखन के दौरान किसी भी लेखक को कई तरह की हिन्दियाँ या भाषायें इस्तेमाल करनी पड़ती है। यह भाषा कभी चरित्रों के हिसाब से तय होती है, कभी परिवेश के अनुसार और कभी इतिहास के मुताबिक़। कोई नयी हिंदी वाला यह जिद नहीं कर सकता कि वह कालिदास कालीन वर्णन में भी नयी हिंदी इस्तेमाल करेगा और तथाकथित पुरानी हिंदी वाला यह नहीं सोच सकता कि आज के स्कूल-कॉलेज के लड़कों की बात-चीत वह पुराने शास्त्रीय अंदाज में लिखेगा।" (श्री प्रियदर्शन - 'और अब नयी हिंदी' लेख)

अंततः हम यही कहेंगे कि समय, समाज और परिवेश से कटकर कोई भी भाषा और साहित्य विकसित नहीं हो सकता तथा साहित्य के विकास के साथ-साथ भाषा भी विकास की सीढ़ियाँ चढ़ती है। हमारे यहाँ पूरा वाङ्गमय है, जो श्रुति और स्मृति परम्परा से लेकर लिखित परम्परा तक का गवाह है। और आज विश्व में 'कोविड - 19' जैसी महामारी के दौरान 'लॉकडाउन' में भी हमारी प्राचीन संस्कृत भाषा के 'गायत्री मन्त्र' और 'मृत्युंजय मन्त्र' अगर दुनिया की जुबान का हिस्सा बन सकते हैं, तो हिंदी की कालजयी रचनाएँ भी आधुनिक डिजिटल युग का हिस्सा बनी रहेंगी। क्योंकि "इस विकास के बावजूद हम अतीत को बिसारते नहीं हैं, बल्कि यह हमारे विकास का आधार बनता है। यही वजह है कि हर युग का साहित्य अपने वर्तमान की जमीन में अतीत की खाद डालते हुए भविष्य के बीज का रोपण करता है। तीनों एक-दूसरे से जुड़े होते हुए भी अपनी स्वतंत्र पहचान और सत्ता रखते हैं।" ('खुल रहा है आसमान ' आवरण कथा - कादम्बिनी पत्रिका, दिसम्बर - १८ अंक) यही बात अक्षरश: हिंदी भाषा पर लागू होती है, जरूरत सिर्फ यह है कि हिंदी भाषा को शैक्षणिक स्तर पर स्कूल में अनिवार्य और उच्च शिक्षा में वैकल्पिक तौर पर रखा जाए। तो कोई भी आधुनिकता हमें अपनी जड़ों की ओर लौटने से रोक नहीं सकती, इस बात को हम सीधे-सीधे सिनेमा के उदाहरण से समझें तो समझने में आसानी होगी। अभी फिलहाल ही आई फिल्म 'अँग्रेजी मीडियम' में नैतिक मूल्यों वाला ग्रामीण अभिनेता अपना तालमेल, नयी दुनिया देखने वाली अपनी पुत्री के साथ भाषा और तकनीक दोनों स्तर पर बैठाने की कोशिश करता है। ये दोनों चरित्र देशी पृष्ठ भूमि में रहते हुए, अपने को विदेशी परिवेश में बदलने के बावजूद एकाएक अपनी जड़ों की ओर वापिस लौटने का निर्णय लेते हैं। आज जबकि टेक्नोलॉजी एवं 'टेकसेवी पीढ़ी' का टाइम है तो इस सबका प्रभाव भाषा और संस्कृति पर पड़ना स्वाभाविक ही है। लेकिन इन सबके बावजूद हिंदी भाषा अपने कालजयी साहित्य के साथ 'क्लासिकल' रूप में तो विद्यमान रहेगी ही, साथ ही डिजिटल लेखन के वर्चुअल स्वरूप में भी अपना बाजार बढ़ाएगी।

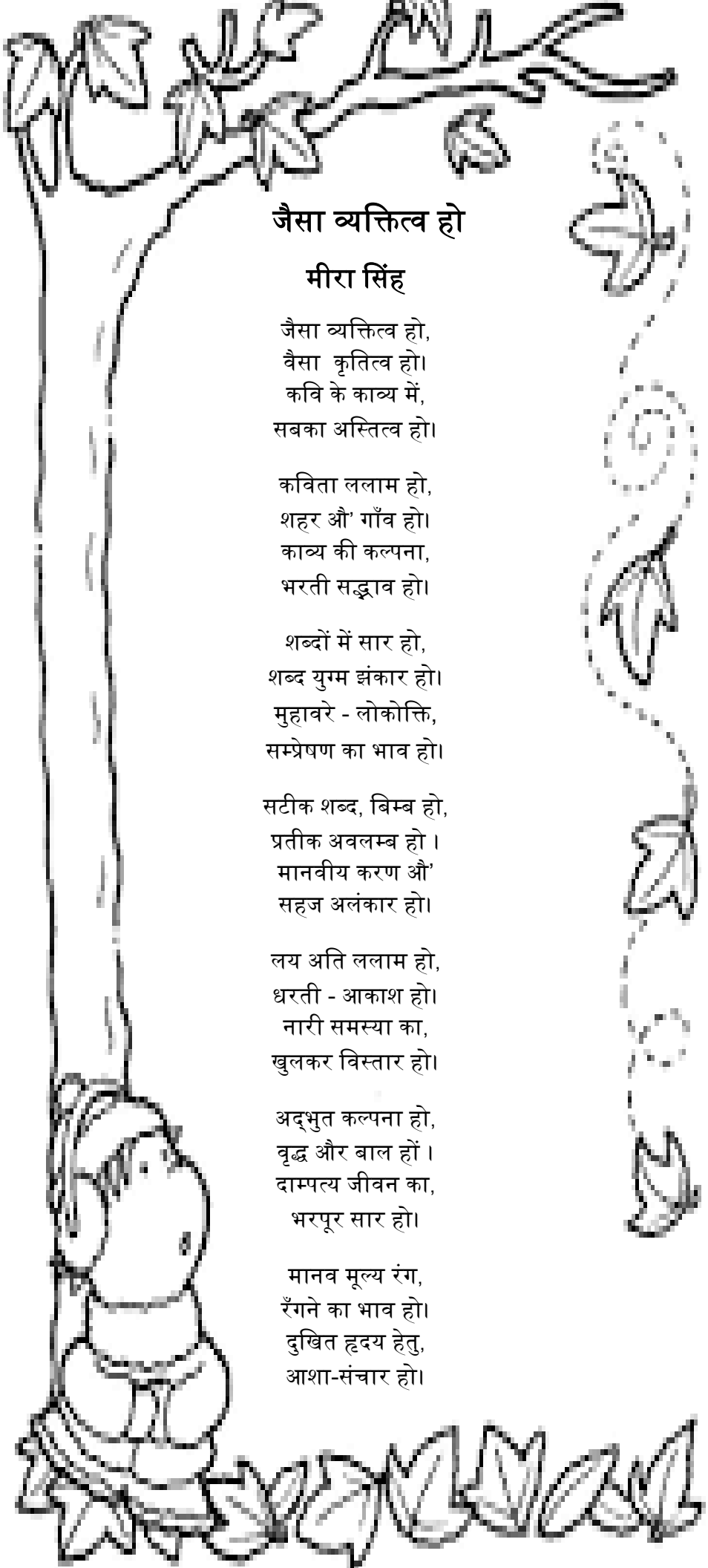

जैसा व्यक्तित्व हो

मीरा सिंह

जैसा व्यक्तित्व हो,
वैसा कृतित्व हो।
कवि के काव्य में,
सबका अस्तित्व हो।

कविता ललाम हो,
शहर औ' गाँव हो।
काव्य की कल्पना,
भरती सद्भाव हो।

शब्दों में सार हो,
शब्द युग्म झंकार हो।
मुहावरे - लोकोक्ति,
सम्प्रेषण का भाव हो।

सटीक शब्द, बिम्ब हो,
प्रतीक अवलम्ब हो ।
मानवीय करण औ'
सहज अलंकार हो।

लय अति ललाम हो,
धरती - आकाश हो।
नारी समस्या का,
खुलकर विस्तार हो।

अद्भुत कल्पना हो,
वृद्ध और बाल हों ।
दाम्पत्य जीवन का,
भरपूर सार हो।

मानव मूल्य रंग,
रँगने का भाव हो।
दुखित हृदय हेतु,
आशा-संचार हो।

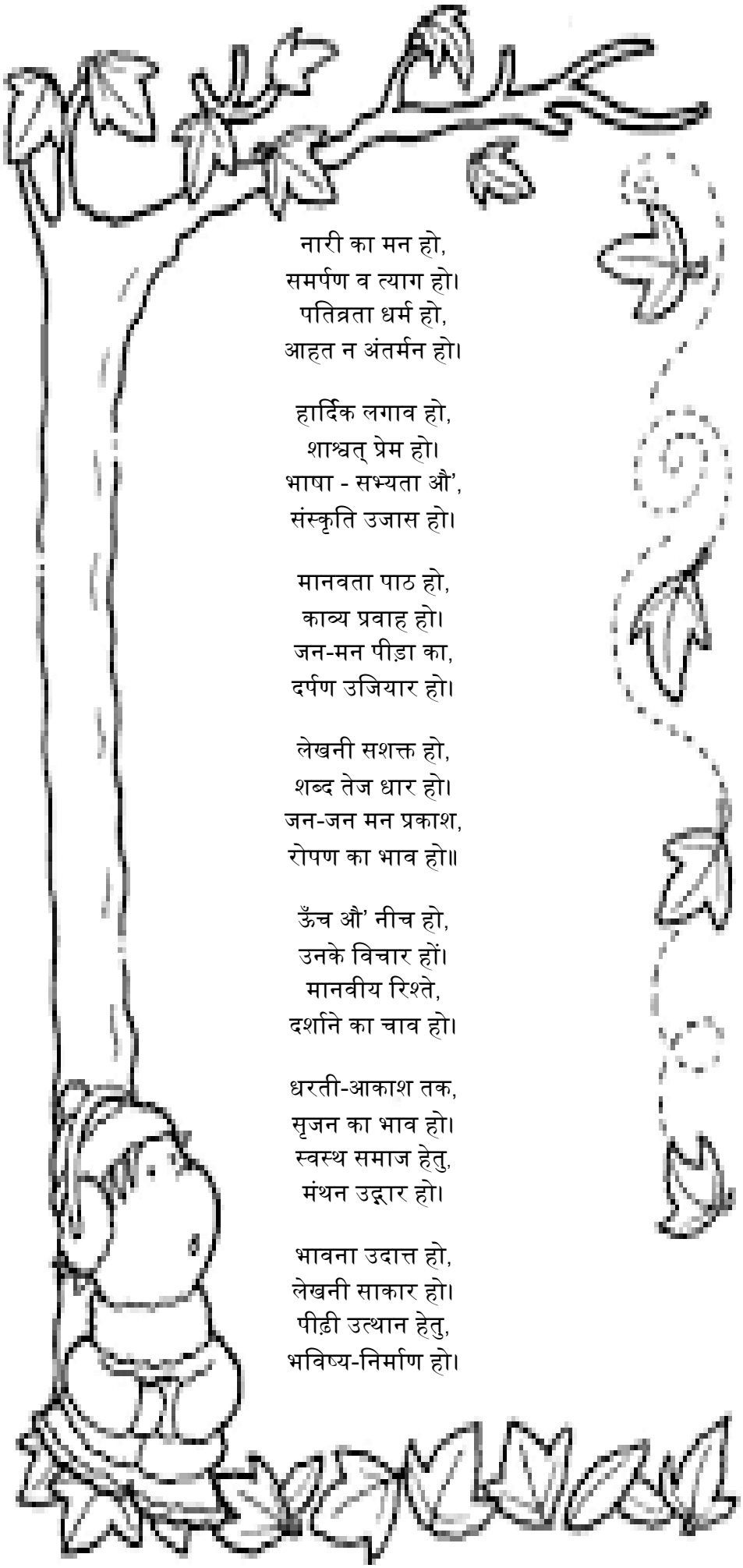

नारी का मन हो,
समर्पण व त्याग हो।
पतिव्रता धर्म हो,
आहत न अंतर्मन हो।

हार्दिक लगाव हो,
शाश्वत् प्रेम हो।
भाषा - सभ्यता औ',
संस्कृति उजास हो।

मानवता पाठ हो,
काव्य प्रवाह हो।
जन-मन पीड़ा का,
दर्पण उजियार हो।

लेखनी सशक्त हो,
शब्द तेज धार हो।
जन-जन मन प्रकाश,
रोपण का भाव हो॥

ऊँच औ' नीच हो,
उनके विचार हों।
मानवीय रिश्ते,
दर्शाने का चाव हो।

धरती-आकाश तक,
सृजन का भाव हो।
स्वस्थ समाज हेतु,
मंथन उद्गार हो।

भावना उदात्त हो,
लेखनी साकार हो।
पीढ़ी उत्थान हेतु,
भविष्य-निर्माण हो।

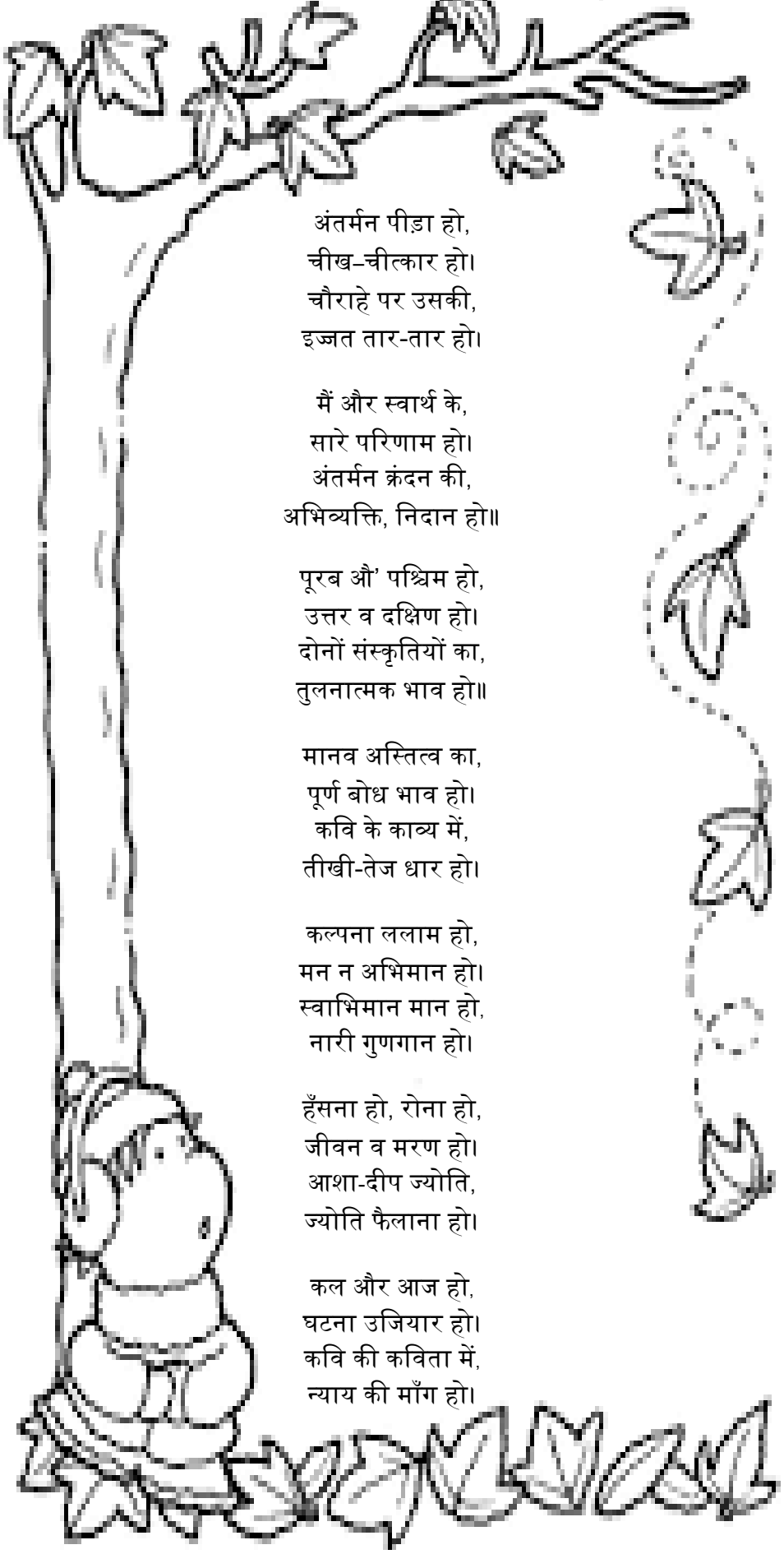

अंतर्मन पीड़ा हो,
चीख–चीत्कार हो।
चौराहे पर उसकी,
इज्जत तार-तार हो।

मैं और स्वार्थ के,
सारे परिणाम हो।
अंतर्मन क्रंदन की,
अभिव्यक्ति, निदान हो॥

पूरब औ' पश्चिम हो,
उत्तर व दक्षिण हो।
दोनों संस्कृतियों का,
तुलनात्मक भाव हो॥

मानव अस्तित्व का,
पूर्ण बोध भाव हो।
कवि के काव्य में,
तीखी-तेज धार हो।

कल्पना ललाम हो,
मन न अभिमान हो।
स्वाभिमान मान हो,
नारी गुणगान हो।

हँसना हो, रोना हो,
जीवन व मरण हो।
आशा-दीप ज्योति,
ज्योति फैलाना हो।

कल और आज हो,
घटना उजियार हो।
कवि की कविता में,
न्याय की माँग हो।

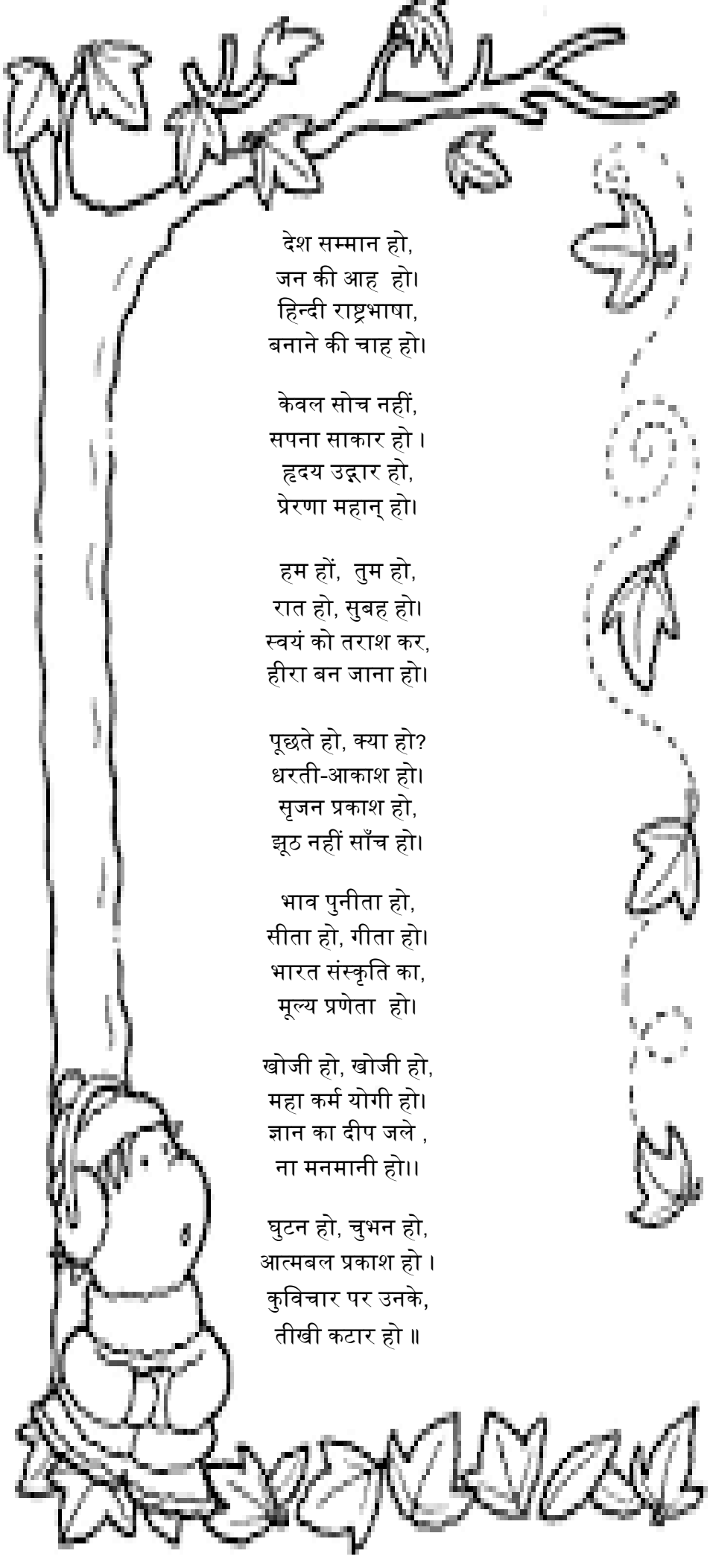

देश सम्मान हो,
जन की आह हो।
हिन्दी राष्ट्रभाषा,
बनाने की चाह हो।

केवल सोच नहीं,
सपना साकार हो ।
हृदय उद्गार हो,
प्रेरणा महान् हो।

हम हों, तुम हो,
रात हो, सुबह हो।
स्वयं को तराश कर,
हीरा बन जाना हो।

पूछते हो, क्या हो?
धरती-आकाश हो।
सृजन प्रकाश हो,
झूठ नहीं साँच हो।

भाव पुनीता हो,
सीता हो, गीता हो।
भारत संस्कृति का,
मूल्य प्रणेता हो।

खोजी हो, खोजी हो,
महा कर्म योगी हो।
ज्ञान का दीप जले ,
ना मनमानी हो।।

घुटन हो, चुभन हो,
आत्मबल प्रकाश हो ।
कुविचार पर उनके,
तीखी कटार हो ॥

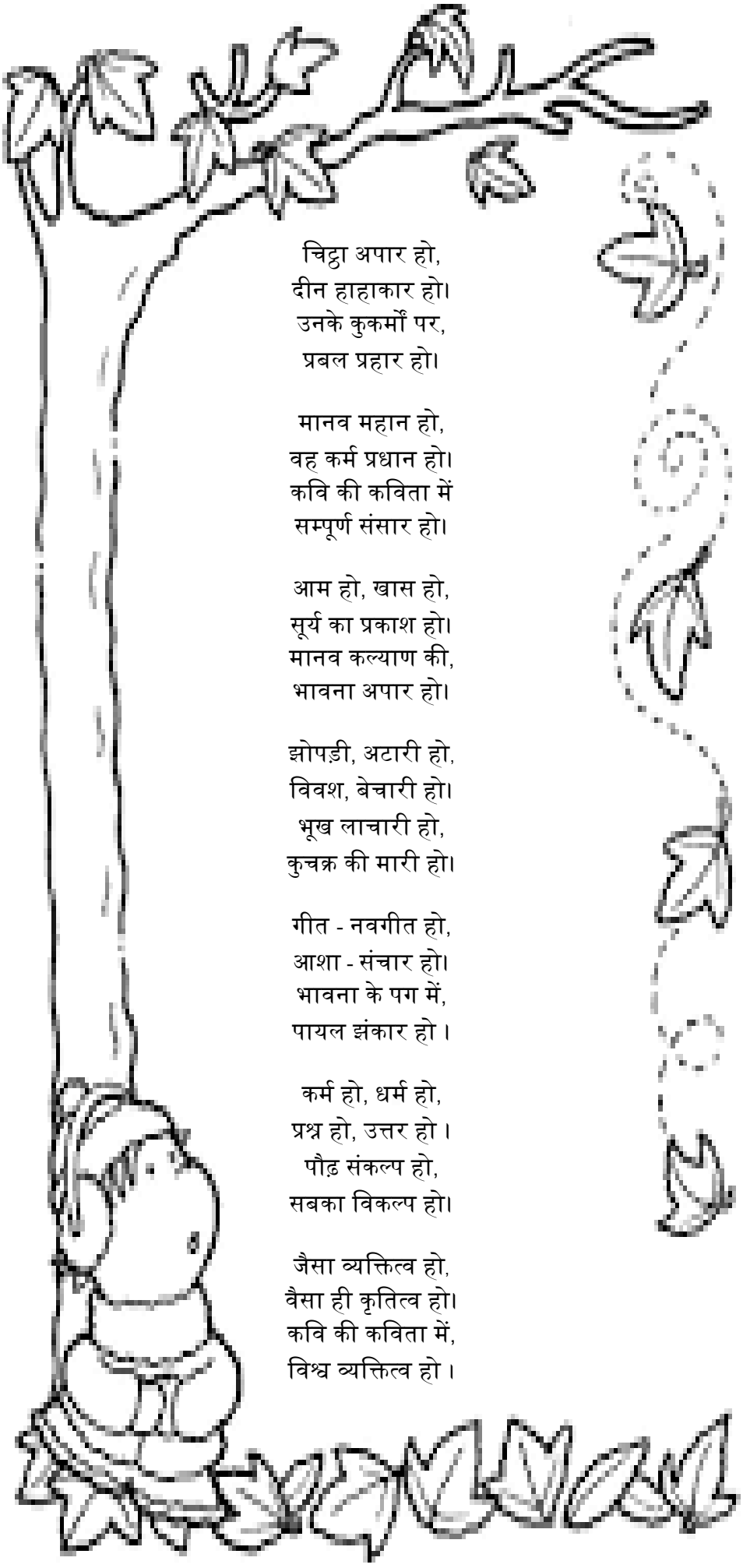

चिट्ठा अपार हो,
दीन हाहाकार हो।
उनके कुकर्मों पर,
प्रबल प्रहार हो।

मानव महान हो,
वह कर्म प्रधान हो।
कवि की कविता में
सम्पूर्ण संसार हो।

आम हो, खास हो,
सूर्य का प्रकाश हो।
मानव कल्याण की,
भावना अपार हो।

झोपड़ी, अटारी हो,
विवश, बेचारी हो।
भूख लाचारी हो,
कुचक्र की मारी हो।

गीत - नवगीत हो,
आशा - संचार हो।
भावना के पग में,
पायल झंकार हो ।

कर्म हो, धर्म हो,
प्रश्न हो, उत्तर हो ।
पौढ़ संकल्प हो,
सबका विकल्प हो।

जैसा व्यक्तित्व हो,
वैसा ही कृतित्व हो।
कवि की कविता में,
विश्व व्यक्तित्व हो ।

होली

सुनीता चाँदला

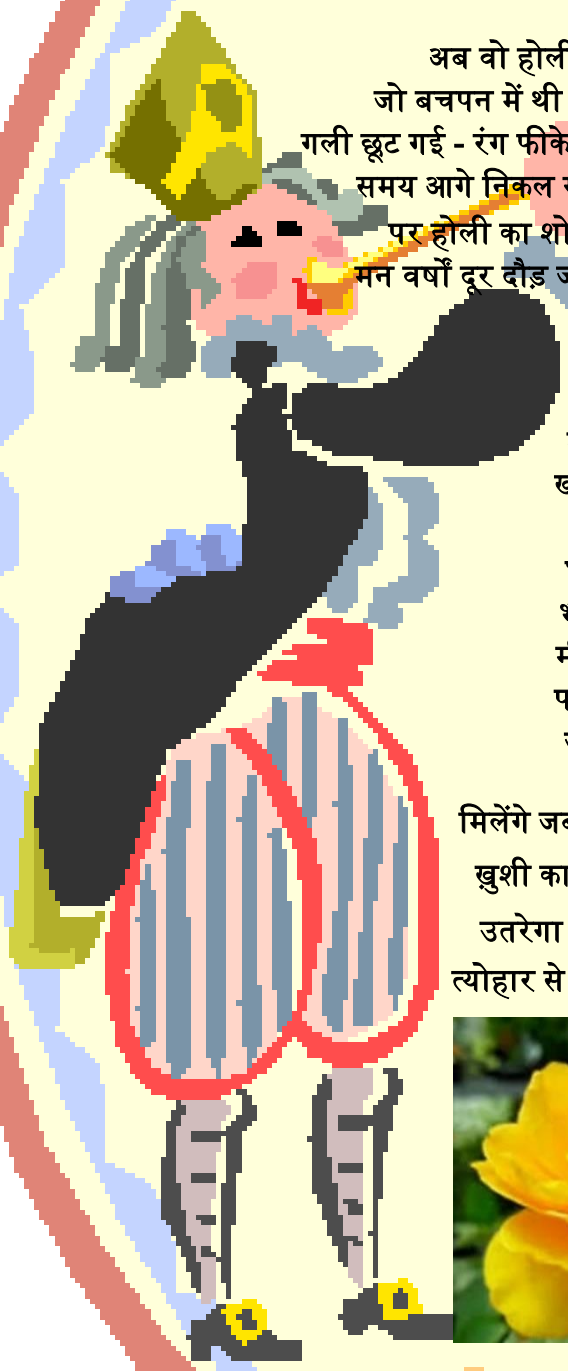

अब वो होली कहाँ
जो बचपन में थी हमारे यहाँ
गली छूट गई - रंग फीके पड़ गए
समय आगे निकल गया, हम पीछे रह गये
पर होली का शोर यहाँ सुनते ही
मन वर्षों दूर दौड़ जाता है आज भी
रंगीन नज़ारे दिखतें हैं अब भी
मैं अकेली रह जाती हूँ गुलाल लिए।

टोलियों की भीड़ से
खड़ी अपने ही नीड़ से
मंज़र सजा लेती हूँ
घटा ५० वर्ष उम्र से
भीग लेती हूँ
मीठी यादों की चाशनी से
पाँव मगर हिलते नहीं
जकड़े ससुराल की जंजीर से।

मिलेंगे जब भी दोस्त, जहाँ भी
ख़ुशी का रंग गूढ़ा ही होगा
उतरेगा ना सरुर कभी भी
त्योहार से वो दिन कम ना होगा।

डॉ. स्नेह ठाकुर का रचना संसार

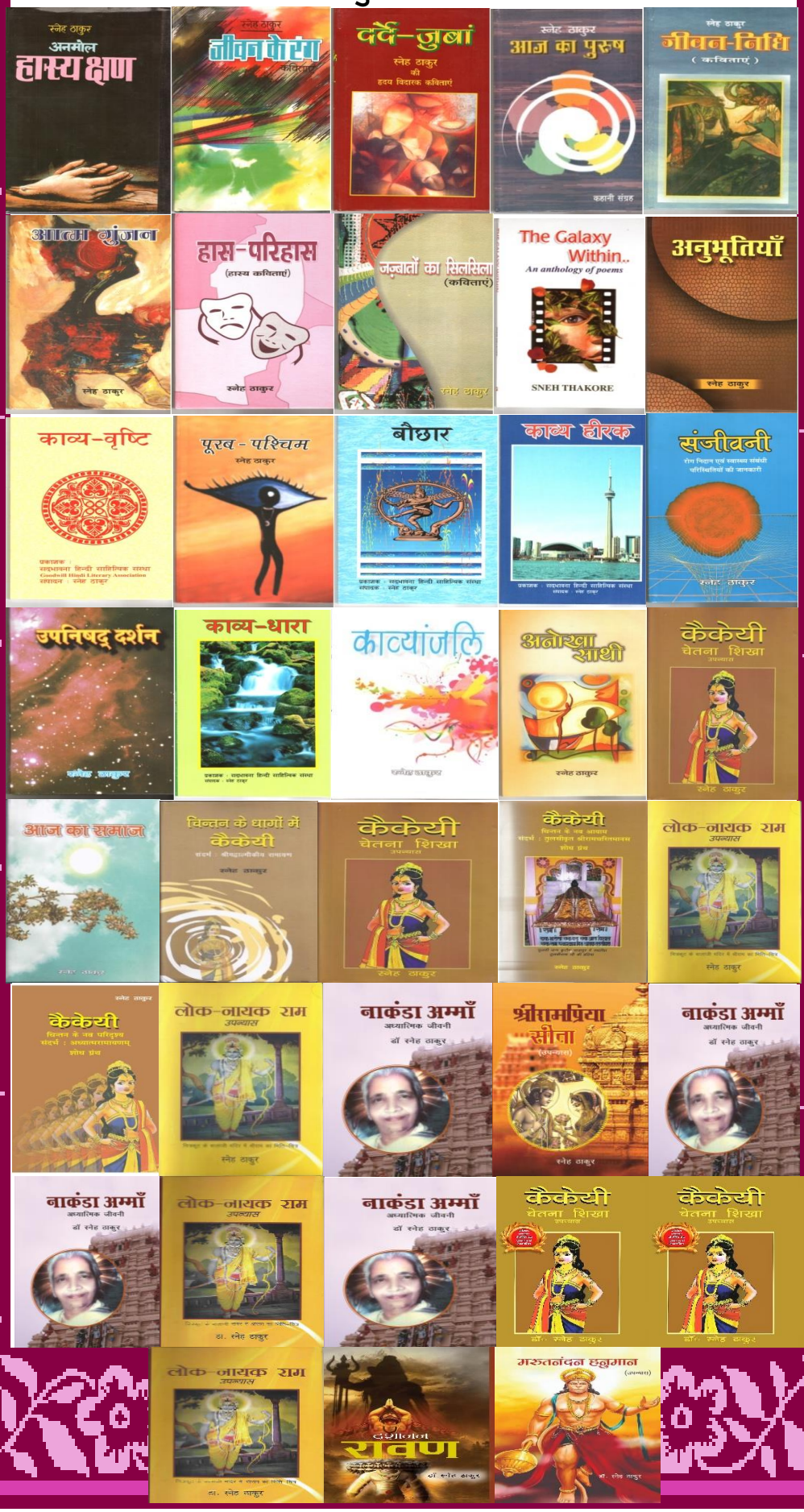

डॉ. स्नेह ठाकुर की प्रकाशित पुस्तकें

मरुतनंदन हनुमान	(उपन्यास)
दशानन रावण	(उपन्यास)
नाकंडा अम्माँ	(अध्यात्मिक जीवनी, चतुर्थ संस्करण)
श्रीरामप्रिया सीता	(उपन्यास)
कैकेयी : चिन्तन के नव परिदृश्य - संदर्भ : अध्यात्मरामायण	(शोध-ग्रन्थ)
लोक-नायक राम	(उपन्यास, चतुर्थ संस्करण)
कैकेयी : चिन्तन के नव आयाम - संदर्भ : तुलसीकृत श्रीरामचरितमानस	(शोध-ग्रन्थ)
चिन्तन के धागों में कैकेयी - संदर्भ : श्रीमदवाल्मीकीय रामायण	(शोध-ग्रन्थ)
आज का समाज	(सामाजिक लेख-संग्रह)
कैकेयी : चेतना-शिखा	(उपन्यास, साहित्य अकादमी म. प्र. अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार सम्मान, चतुर्थ संस्करण, राष्ट्रपति भवन पुस्तकालय में संग्रहित)
अनोखा साथी	(कहानी-संग्रह)
काव्यांजलि	(काव्य-संग्रह)
काव्य-धारा	(संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
उपनिषिद दर्शन	(दार्शनिक एवं अध्यात्मिक)
संजीवनी	(स्वास्थ्य सम्बन्धी आलेख)
काव्य हीरक	(संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
बौछार	(संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
पूरब-पश्चिम	(आप्रवासी सम्बन्धित आलेख संग्रह)
काव्य-वृष्टि	(संकलन, संपादन एवं प्रकाशन)
अनुभूतियाँ	(काव्य-संग्रह)
The Galaxy Within	(A collection of English poems)
ज़ज़्बातों का सिलसिला	(काव्य-संग्रह)
हास-परिहास	(हास्य कविताएँ)
आत्म-गुंजन	(अध्यात्मिक-दार्शनिक गीत)
जीवन-निधि	(काव्य-संग्रह)
आज का पुरुष	(कहानी-संग्रह)
दर्द-जुबाँ	(नज़्म व ग़ज़ल संग्रह)
जीवन के रंग	(काव्य-संग्रह)
अनमोल हास्य क्षण	(नाटक-संग्रह, फेडरल गवर्नमेन्ट, कैनेडा द्वारा अधिकतम अनुदान से सम्मानित)

प्रकाशक व वितरक

स्टार पब्लिकेशंज़ (प्रा.) लि.
४/५ बी., आसफ अली रोड
नई दिल्ली - ११०००२
भारत

Star Publishers' Distributors
55, Warren Street
LONDON – W1T 5NW
England

दिल्ली प्रेस की सरिता व अन्य राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में भी रचनाएँ प्रकाशित